॥ श्री वीतरागाय नम ॥

ऋषिमंडल-स्तोत्र

जिसमें

भावार्थ, यंत्र बनानेकी तरकीब, विधि विधान, आम्ना, सकलीकरण उत्तरक्रिया आदि का सविस्तर वर्णन किया है

संग्राहक

सेठ चन्दनमलजी नागोरी

छोटी सादड़ी (मेवाड)

मिलनेका पता

श्री सद्गुण प्रसारक मित्रमंडल

पो छोटी सादड़ी (मेवाड)

प्रथमावृत्ति	सम्वत्	मूल्य यंत्रसहित १॥)
१०००	१९९६	बगैर यंत्रके १।)

यंत्र २३ इंचका साथ मे है । कीमत ०॥)

प्रकाशक :
जैन साहित्य सदन
छोटी सादड़ी (मेवाड़)

धन्यवाद

श्रीमती बाई जासुद शेठ जीवाभाई पीतांबरदास लुहारकी पोल अहमदाबादने इस पुस्तककी दोसौ नकल लेकर प्रकाशनमे सहायता दी है एतदर्थ धन्यवाद

प्रकाशक

प्रस्तावना

ऋषिमंडल स्तोत्र-भावार्थ, यंत्र, आम्ना, आराधना, मंत्रभेद सकलीकरण, उत्तरक्रिया, विधिविधान, ध्यानस्मरण, पूजा, आदि विषय सहित पाठकोंके हाथमे है। इस पुस्तकमे जहां तक हो सका है स्पष्टीकरण किया गया है। फिरभी मंत्रशास्त्र जैसे विषयमें मैं निष्णात नही हूं, इसलिये त्रुटिया रहजाना सम्भव है। मंत्रका विषय मामूली बात नहीं है, इस विषयमेंतो जो निपुण होते हैं वही इसका सम्पूर्ण भेद पा सक्ते हैं। मेरेमें इतनी योग्यता नही है, लेकिन ज्ञानी योकी कृपासे जो कुछ सग्रह कर पाया हूं वही पाठकोंके सामने है, इसमे मेरा कुछभी नही है, जो कुछ आप देखेंगे पूर्वाचार्योकी कृतियोंसे उद्धृत किया हुवा पावेंगे साथही उन पूर्वाचार्योंका कि जिनकी कृत्तियोमेंसे बयान लिया गया है उनका व उन पुस्तकोंके प्रकाशकोंका आभार मानता हूं।

वर्तमानकी समाजमे मंत्रशक्तिपर विश्वास और अविश्वास करने वाले कम नहीं हैं। साथही मंत्रबलके प्रभावसे कठिन कार्योंकी सिद्धि हो जानेके उदाहरणभी बहुतायतसे प्राप्त होते हैं, जिनको देखते मंत्रबलके लिये किसी तरहकी शंका नही रहती।

मंत्रोंके रचियता महापुरुष बहुत सामर्थ्यवान होते हैं, और उनकी रचनामें विशिष्ट प्रकारकी सिद्धियां समाई हुई होती है। जिनके प्रभावसे मंत्रके अधिष्टाता देव कार्यकी पूर्तीमें सहायक होते हैं और इस विषयके बहुतसे उदाहरण शास्त्रोंमें बताये हैं।

मंत्रसिद्ध करनेवाले पुरुषको छन्द पद्धति राग आलाप पदच्छेद शुद्धता पूर्वक उच्चार आदिपर पूरा लक्ष देना चाहिये। जो मनुष्य एकाग्रमनसे ध्यान करते हैं, उन्हे अवश्य सिद्धि प्राप्त होती है, मंत्रबलसे कठिन समस्या भी शीघ्र हल हो जाती है। मंत्रआराधना करनेवालोंको ख्याल रखना चाहिये कि पुंगी बजानेसे सांप आता है, लेकिन हारमोनियम सीतार सारंगी, आदिके बजानेसे सप नही आता। जहां पुंगी बजावे बिलमेंसेही मस्त होते हुवे फणको फैलाकर मस्तीमें आये हुवे नागराज फौरन पुंगीके सामने आखडे होते हैं। इसी तरह मंत्र-स्तोत्रके लिये भी समझना चाहिए। यदिक्रिया शुद्ध है उच्चारभी यथोचित है तो सिद्धिमेंभी विलम्ब नही है।

इस पुस्तकमें लगभग उनचालीस विषयोंपर प्रकाश डाला है और मंत्र यंत्र आम्नाय विधिके लिये पृथक पृथक प्रकरण बनाकर समझनेमें सुविधाये की गई हैं। ऋषिमंडल मंत्र यंत्रको समझनेके लिए इस पुस्तकमें प्रथम ऋषिमंडल मंत्र महिमा बताकर ऋषिमंडल मूल पाठ दिया गया है। बादमें मूल पाठको भावार्थ सहित बताकर ऋषिमंडल यंत्र बनानेकी तरकीबका बयान कर पदस्थ ध्यानका कुछ वर्णन किया गया है, और मायाबीज (ह्रीं) को मायाबीज सिद्ध करनेके

लिए (ई) अक्षरके पांच विभाग बनाकर मंत्र बनाया गया है और इन पांचो विभागोंसे स्वर व्यंजन अक्षरोंकी योजनाका बयान करके सकलीकरणका वर्णन कर ध्यानादिका उल्लेख किया गया है, फिर अधिष्ठायक देवदेव, अधिष्ठायक आज्ञा, त्रिशोपचार, पूजा याने हस्तक्रिया आरती और मालाविचारको बताकर पुस्तक सम्पूर्ण की गई है।

चित्र संख्या लगभग आठ है जो दर्शन योग्य है और पुस्तककी महिमाको बढानेवाले व अधिष्ठायक स्तोत्र-यन्त्र-मंत्रकी आराधनामें उपयोगी समझ तीन फोटो भी साथमें लगाकर दिये गये हैं सो पाठक देख लेवें।

पुस्तकके प्रकाशनमें शुद्धताका बहुत ध्यान रखते हुये भी अशुद्धियां रह जाती हैं, और इस तरह रह जानेके कई कारण होते हैं जो प्रकाशन कार्य करनेवालोंसे छिपे हुये नहीं हैं एतदर्थ अशुद्धियोंके लिये पाठक क्षमाकर सुधार कर पढें और इस पुस्तकमें बताये हुये विधानका लाभ लेकर कृतार्थ करें। इति—

मु० अहमदाबाद
भाद्रपद शुक्ला १५
सम्वत् १९९६
ता २८-९-१९३९

प्रकाशक-
चंदनमल नागोरी
छोटीसादडी (मेवाड)

अनुक्रमणिका

चित्रसूची

भेंट

श्रीयुत ______________________

____

______________________ की सेवामें

____

____

______________________ की तर्फ़से भेंट

ऋषि मंडल मूल मंत्र

ॐ ह्राँ ह्रीँ ह्रुँ ह्रूँ

ह्रेँ ह्रैँ ह्रौँ ह्रँ. असिआउसा

सम्यग्दर्शन ज्ञान

चारित्रेभ्यो ह्रीँ नमः ॥



॥ ॐ ॥

ऋषि मंडल

स्तोत्र-मंत्र-महिमा

श्री मंडल स्तोत्र की महिमा पारावार है । श्रद्धावान मनुष्य इस स्तोत्र का पाठ बहुत प्रेमसे करता है । मुख्यतया इस स्तोत्र में " ह्रीं " का ध्यान आता है, और " ह्रीं " में चौबीस जिनेश्वर भगवान की स्थापना बताकर ध्यान करना बताया है, जिसका विवरण स्तोत्र के भावार्थ से स्पष्ट सिद्ध हो जाता है ।

इस स्तोत्र की रचना के बाबत इस स्तोत्र के गुनचालवें श्लोक से सिद्ध होता है कि इस स्तोत्र के प्रणेता श्री तीर्थङ्कर भगवन्त हैं, और इस की सङ्कलना गणधर गौतम स्वामी महाराजने की है ।

इस मन्त्र के भावार्थ में ही मूल मन्त्र गर्भित निकलता है, और इस स्तोत्र की आम्नाय याने विधि भी भावार्थ में निकलती है । इस स्तोत्र में देवाक्षर, बीजाक्षर, भरे हुवे हैं, जिसको ठीक तरह समझ कर इस स्तोत्र का नित्य पाठ किया जाय व ह्रीं का ध्यान किया जाय तो अवश्य कल्याण होता

है। इस स्तोत्र में "ह्रीं" को मुख्य माना गया है जिसका वर्णन करते कहा है कि,

ध्यायेत्सिताब्ज वक्त्रान्तरष्टवर्गीदलाष्टको ॥
ॐ नमो अरिहंताणमिति वर्णानमिक्रमात ॥१॥

भावार्थ—मुख के अन्दर आठ कमल वाले श्वेत कमल का चिंतवन करे, और उसके आठों कमल में अनुक्रम से "ॐ नमो अरिहन्ताण" के आठों अक्षरों को एक एक कमल म अनुक्रम से स्थापित करे। कमल के भाग की केसरा पंक्ति को स्वरमय बनावे, और इन कमलों की कर्णिका को अमृत बिंदु से विभुषित करे, उन कर्णिकाओं में से चन्द्रबिम्ब से गिरते हुवे मुख कमल से सञ्चारित प्रभामंडल के मध्यमे विराजित चन्द्र जैसे कान्ति वाले माया बीज "ह्रीं" का चिंतवन करे। इस तरह चिंतवन करने के बाद कमल के पुष्प के पत्तों में भ्रमण करते आकाश तल से सञ्चारित मन की मलीनता का नाश करते हुवे अमृत रस से झरते और तालुरन्ध्र से निकलते हुवे भ्रकुटी के मध्य में शोभायमान तीनलोक में अचिंतनीय महात्म्य वाले तेजोमय की तरह अद्भुत एसे इस "ह्रीं" का ध्यान किया जाय तो एकाग्रता पूर्वक लय लगाने वाले को वचन और मनकी मलीनता दूर करने पर श्रुत ज्ञान का प्रकाश होता है।

उपर लिखे अनुसार जो कोई इस तरह का ध्यान छे महिने तक कर लेता है, उसके मुखमें से धूम्र की शिखायें निकलती हुई वह खुद देखता है। इसी तरह एक वर्ष पर्यन्त अभ्यास किया जाय तो वह पुरुष उसी के मुखमें से ज्वालायें निकलती हुई देखता है। इस तरह ज्वालायें देख लेने बाद सतत् अभ्यास बढाते बढाते वह पुरुष इस कोटी तक पहुच जाता है कि, उस पुरुष को अत्यन्त महात्म्य वाले कल्याणकारी अतिशयवान भामण्डल के मध्यमें विराजित साक्षात् सर्वज्ञ भगवान के दर्शन होते हैं।

इस तरह परमात्मा के दर्शन हो जाने बाद इसी ध्यान को स्थिरता पूर्वक एकाग्रमन होकर निश्चय रूप से लय लगाता रहे तो परिणाम की धारा एसी चढ जाती है के उस मनुष्य के निकट द्दत्ति मोक्ष सुख उपस्थित होते हैं, और वह पुरुष परम पद पाता है।

ह्रीँ की महिमा अपरम्पार है, और यह ऋषि मडल का मूल बीज है, इसकी महिमा को समझ कर ऋषि मडल के मूल मन्त्र को शुद्धतापूर्वक सीख लेना चाहिये।

आस्तिक पुरुषों को मन्त्र विधान पर बहुत श्रद्धा होती है, जिसका स्पष्टीकरण करते हुवे "अनुभव सिद्ध मन्त्र द्वात्रिंशिका, और योगशास्त्र" आदि ग्रन्थों में बहुत विवेचन किया

गया है। मत्र उपर सम्पूर्ण श्रद्धा रखने वाले और मत्र को नही मानने वाले दोनो आधुनिक कालमे मोजूद है, लेकिन मत्र बल, मत्र शक्ति, मत्र प्रभाव के बहुत से एसे प्रमाण मिलते है कि इस विषय में स्वभाविक श्रद्धा मनुष्य को हो जाती है, और मत्र प्रभाव से याने मत्र का सिद्ध कर के बहुत सी व्यक्तियोने विजय पाई है।

मत्र अर्थात् अमुक अक्षरोंकी अमुक प्रकार की सङ्कलना। एसी सङ्कलना से परिस्थिति पर विशिष्ट असर होती है, और कई विद्वानो का एसा कथन है। उदाहरण भी है कि, मत्र पर श्रद्धा रखने वाले पुरुष गारुडी मत्र जिसके प्रभाव से झहर उतर जाता है, और मत्र बल से काट कर भग जाने वाला साप भी मत्र के आधीन हो तत्काल गारुडी की शरण में आता है। इस उदाहरण से समझ सकते है कि मत्र कितने बलवान होते है, इसी तरह मत्र बलसे ही कई तरह के प्रयोग –मदिर को उडा ले आना उपद्रव–रोग–आदि हटाने के लिए किये गये जिन के दृष्टान्त देखने में आते है। इस आधुनिक बुद्धिवाद के जमाने में जिस तरह आकर्षण शील विद्युत और प्रेरक विद्युत के समागम से प्रकाश उत्पन्न होता है। तदनुसार भिन्न भिन्न स्वभाव वाले अक्षरों की यथायोग्य रीत से सङ्कलना होती है तो उसके प्रभाव से किसी अपूर्व शक्ति का प्रादुभाव होता है। यह तो निसन्देह सिद्ध है कि महापुरुषों के उचारित सामान्य शब्दों में भी अद्भुत सामर्थ्य समाया

हुवा होता है, तो फिर अमुक उद्देष पूर्वक विशिष्ट वर्णोंकी की हुई सङ्कलना का बल तो अजीब प्रकार का हो उस में सन्देह ही क्या है ?

मत्र पद के रचयिता महापुरुष जितने दरजे सत्य सयम के पालने वाले होंगे उतने ही परिणाम में विशिष्टता का सम्भव है। इसी कारण मत्र को भाषा में परिवर्तन किया जाय, या तद्गत अर्थ अन्य भाषा–उर्दू–पद्धति द्वारा कथित किया जाय तो वह किया हुवा परिवर्तन मत्र की गरज को पूरी नहीं कर सकता। एसा परिवर्तन तो सामान्यतः अर्थ–भावार्थ समझने व श्रद्धा को विशेष मजबूत बनाने के हेतु से होता है।

मत्र का ध्यान करने वाले पुरुष को चाहिये कि वह जिस मत्र का आराधन करना चाहता है उस मत्र का यथार्थ स्वरूप समझ लेवे और उसकी शक्ति का प्रभाव स्मरण पट पर खडा करने के लिये मानसिक विशुद्धि क्रिया की तरफ पूरा लक्ष रखे। मत्र के अधिष्ठाता कोई भी देव हो या देवी हो उनका नाम लेते ही उनका मूर्तिमत स्वरूप स्मृति मे आ कर खडा हो जाना चाहिये। उनका सारा वृतान्त उन के गुण उन की महिमा का स्मरण सामने ही खडा हो जाय इस तरह ध्यानमग्न होते हैं उन पुरुषों को देव–देवी के साक्षात् दर्शन होते हैं और अपूर्व लाभ मिलता है।

मंत्र के अधिष्ठायक देव निज के भक्तों को कष्ट दूर करने के हेतु किस प्रकार सहायक हुवे है, और होते हैं एसे वृत्तान्त को भी जानने की आवश्यक्ता है। देव–देवी की अपार शक्ति और निजकी क्षुद्रता को पूरी तरह लक्ष में रखना चाहिये। आराधन करने वाले पुरुष का कर्तव्य है कि वह मंत्राधिष्ठित देव–देवी की अपार दया व प्रेम से द्रवित होकर उस के पुनित स्वरुप में तन्मय हो जाने की चेष्टा करे। इस तरह की तन्मयता से सिद्धी प्राप्त करने में सहायता मिलती है।

यह बात तो भलि भांति समझ में आ गई होगी कि मंत्र की रचना मर्यादित अंक में मर्यादित अक्षर में विशिष्ट पद्धति अनुसार मंत्रशास्त्र शक्ति के विशारद अनुभवी महात्माओं द्वारा रचित होती है। जिसका हेतु बहुत गहन होता है, और मंत्र शास्त्र के नियमानुसार अक्षरों का मीलान संयुक्ताक्षर, द्वाक्षरी, त्रितियाक्षरी, चतुराक्षरी, पञ्चाक्षरी, पष्ठाक्षरी, सप्ताक्षरी, अष्टाक्षरी, और नवाक्षरी तक किया हुवा होता है। इसी लिये एसे महान मंत्रों का जाप बारम्बार करने से सिद्ध हो जाता है। जिसका फल अमोघ अर्थात् महान लाभदाई बताया है, अतः एसे महान मंत्र का विशेष पद्धति सहित जप–ध्यान किया जाय तो विशेष फलदाई होता है।

जिन लोगोंको मंत्र पर श्रद्धा नहीं हैं वह गल्ती पर हैं,

स्तोत्र शक्तिसे मंत्रशक्ति कइ गुणी बलवान होती है। जैन धर्ममें तो मंत्र महिमाको विशेष महत्व दिया गया है, इसी लिये हरएक क्रियामें ध्यान करनेके लिये "नवकारमंत्र" बताया गया है जिसके कइ भेद हैं जो सविस्तर "श्री नवकार महामंत्र कल्प" नामकी पुस्तकमें प्रकाशित हो चुके हैं।

मंत्र शब्द जिस जगह आता है वहा ध्याता पुरुषको श्रद्धा हो जाती है और वह समझता हैं कि मंत्र है तो कोई अपूर्व शक्तिका समावेश होना चाहिये। मंत्र शास्त्रमें जैनाचार्योंकी निपुणता तो जग प्रसिद्ध है। पूर्वाचार्योंने मंत्रशक्ति का वर्णन करते हुए बहुतसे सूत्र ग्रन्थ प्रतिपादित कर जनताको यह बताया है कि मंत्रबलसे कठिन कार्यभी सिद्ध हो जाते हैं, वैसे सूत्र ग्रन्थोंके नाम इस प्रकार हैं।

(१) अरुणोववाइ सूत्र—इस सूत्रमें अरुणदेवको प्रसन्न करनेका बयान किया गया है।

(२) वरुणोववाई सूत्र—इस सूत्रसे यह सिद्ध कर बताया है कि मंत्रके आराधनसे वरुणदेवता किस तरह प्रसन्न होते है।

(३) गुरुल्लोववाई सूत्र—इसमें यह बताया है कि एकाग्रता पूर्वक इसका पठन करे तो व्यंतरदेव प्रसन्न होते है।

(४) धरुणोववाई सूत्र—इसमें यह तरकीब बताई गई है

मंत्र के अधिष्टायक देव निज के भक्तोंको कष्ट दूर करने के हेतु किस प्रकार सहायक हुवे हैं, और होते हैं एसे वृत्तान्त को भी जानने की आवश्यक्ता है। देव–देवी की अपार शक्ति और निजकी क्षुद्रता को पूरी तरह लक्ष में रखना चाहिये। आराधन करने वाले पुरुष का कर्तव्य है कि वह मंत्राधिष्ठित देव–देवी की अपार दया व प्रेम से द्रवित होकर उस के पुनित स्वरूप में तन्मय हो जाने की चेष्टा करे। इस तरह की तन्मयता से सिद्धी प्राप्त करने में सहायता मिलती है।

यह बात तो भलि भांति समझ में आ गई होगी कि मंत्र की रचना मर्यादित अंक में मर्यादित अक्षर में विशिष्ट पद्धति अनुसार मंत्रशास्त्र शक्ति के विशारद अनुभवी महात्माओं द्वारा रचित होती है। जिसका हेतु बहुत गहन होता है, और मंत्र शास्त्र के नियमानुसार अक्षरों का मीलान संयुक्ताक्षर, द्वाक्षरी, त्रितियाक्षरी, चतुराक्षरी, पञ्चाक्षरी, षष्ठाक्षरी, सप्ताक्षरी, अष्टाक्षरी, और नवाक्षरी तक किया हुवा होता है। इसी लिये एसे महान मंत्रों का जाप वारम्वार करने से सिद्ध हो जाता है। जिसका फल अमोघ अर्थात् महान लाभदाई बताया है, अतः एसे महान मंत्र का विशेष पद्धति सहित जप–ध्यान किया जाय तो विशेष फलदाई होता है।

जिन लोगोंको मंत्र पर श्रद्धा नहीं है वह गलती पर हैं,

स्तोत्र शक्तिसे मन्त्रशक्ति कइ गुणी बलवान होती है। जैन धर्ममें तो मन्त्र महिमाको विशेष महत्व दिया गया है, इसी लिये हरएक क्रियामें ध्यान करनेके लिये "नवकारमन्त्र" बताया गया है जिसके कइ भेद हैं जो सविस्तर "श्री नवकार महामन्त्र कल्प" नामकी पुस्तकमें प्रकाशित हो चुके हैं।

मन्त्र शब्द जिस जगह आता है वहां ध्याता पुरुषको श्रद्धा हो जाती है और वह समझता हैं कि मन्त्र है तो कोई अपूर्व शक्तिका समावेश होना चाहिये। मन्त्र शास्त्रमें जैनाचार्योंकी निपुणता तो जग प्रसिद्ध है। पूर्वाचार्योंने मन्त्रशक्तिका वर्णन करते हुए बहुतसे सूत्र ग्रन्थ प्रतिपादित कर जनताको यह बताया है कि मन्त्रबलसे कठिन कार्यभी सिद्ध हो जाते हैं, वैसे सूत्र ग्रन्थोंके नाम इस प्रकार हैं।

(१) अरुणोववाइ सूत्र—इस सूत्रमें अरुणदेवको प्रसन्न करनेका बयान किया गया है।

(२) वरुणोववाई सूत्र—इस सूत्रसे यह सिद्ध कर बताया है कि मन्त्रके आराधनसे वरुणदेवता किस तरह प्रसन्न होते हैं।

(३) गुरुलोववाई सूत्र—इसमें यह बताया है कि एकाग्रता पूर्वक इसका पठन करे तो व्यंतरदेव प्रसन्न होते हैं।

(४) धरुणोववाई सूत्र—इसमें यह तरकीब बताई गई है

कि इसका ध्यान एकाग्रता पूर्वक करे तो धरणदेव प्रसन्न होते हें।

(५) वेसमणोववाई सूत्र—इस में यह प्रतिपादित किया है की ईसका ध्यान करने से वैश्रमणदेव प्रसन्न होते है।

(६) वेलधरोववाई सूत्र—में वेलधरदेवको प्रसन्न करनेका बयान किया है।

(७) दिविंदोववाई सूत्र—में यह बताया है कि आराधना करने से देवेन्द्रदेव प्रसन्न होता है।

(८) उट्ठाणसुये—इसमें अजीब प्रकारका वर्णन है और देव को प्रसन्न करनेकी तरकीब बताई है।

(९) समुट्ठाणसुये—इसमें यह बात बताई है कि आराधक पुरुष सौम्यदृष्टि रखकर आराधना करने से गावके लोक सुखी हो जाते हैं।

(१०) नागपरिया वलियाओ—इस सूत्रमें यह बताया गया है कि आराधन करने से नागकुमारदेव प्रसन्न होते हैं।

(११) आशिविषसूत्र—साप विचार आदिका बयान किया गया है।

(१२) दिट्ठि विषभाव—इसमें दृष्टिविष सापोंका सविस्तर वर्णन किया गया है।

इस तरह पूर्वाचार्योंने निजका ज्ञान प्रगट करनेमें किसी तरहकी कमी नही की। इसी तरह (१) भक्तामर स्तोत्र, (२) कल्याण मंदिर स्तोत्र, (३) तिजय पहुत. (४) उवसग्ग-हर, (५) ऋषिमडल, आदि सैंकडो स्तोत्रोंके रचियता जैनाचार्य हैं। एसे स्तोत्रोंमें गर्भित कई प्रकारके मन्त्र-यन्त्र बताये गये हैं जिनकी महिमा पारावार हैं। इसके अतिरिक्त और भी मन्त्र महिमाके कई उदाहरण मिल सकते हैं।

आराधक पुरुषको साधन करनेसे पहले साधककी योग्यता प्राप्त करलेना चाहिये, क्योंकी योग्यतासे अधिकार बढता है, अधिकार बढनेसे आत्मगुणकी तरफ लक्ष जाता है, और आत्मनिष्ठा बढनेसे सत्य संयमका भण्डार बन जाता है, फिर मन्त्रसिद्ध करनेमें विशेष विलम्ब नही होता और साधक पुरुषकी साध्यदृष्टि सिद्ध हो जाती है।



ऋषि मंडल-स्तोत्र



आद्यताक्षरसंलक्ष्यमक्षरं, व्याप्य यत्स्थितं ॥
अग्निज्वालासम नाद विन्दुरेखासमन्वितं ॥ १ ॥
अग्निज्वालासमाक्रान्त–मनोमलविशोधकं ॥
देदीप्यमान हृत्पद्मे,–तत्पदं नौमिनिर्मल ॥ २ ॥
अर्हमित्यक्षरं ब्रह्मवाचक परमेष्ठिन ॥
सिद्धचक्रस्य सद्बीज–सर्वत प्रणिदध्महे ॥ ३ ॥
ॐ नमोर्हद्भ्य ईशेभ्य ॐ सिद्धेभ्यो नमोनम
ॐ नम सर्वसूरिभ्य उपाध्यायेभ्य ॐ नम ॥४॥
ॐ नम सर्व साधुभ्य ॐज्ञानेभ्यो नमोनम ॥
ॐ नम स्तत्वदृष्टिभ्यश्चारित्रेभ्यस्तु–ॐ नम ॥५॥
श्रेयसेस्तु श्रियेस्त्वेतदर्हदाद्यष्टक शुभ ॥
स्थानेष्वष्टसु विन्यस्त, पृथग्बीज समन्वित ॥६॥
आद्य पद शिखा रक्षेत्, परं रक्षतु मस्तके ॥
तृतीय रक्षेन्नेत्रे द्वे,–तुर्यं रक्षेच्च नासिकां ॥ ७ ॥

॥ श्री महावीर भगवान ॥



ईश्वर ब्रह्मसंबुद्ध-शुद्ध सिद्ध मत-गुरु ॥
ज्योतीरूप महादेव, लोकालोक प्रकाशक ॥
॥ ऋषिमंडल ॥

ीनीक्ष प्रा वक्स, अमदाव

पंचम तु मुखं रक्षेत्,–षष्टं रक्षेच्च घंटिकां ॥
नाभ्यंतं सततं रक्षेद्रक्षेत् पादांतमष्टमं ॥ ८ ॥
पूर्वप्रणवतः सांत सरेफो लब्धिपंचखान् ॥
सप्ताष्टदशसूर्यकान्–श्रितो विन्दुस्वरान् पृथक् ॥९॥
पूज्यनामाक्षरा आद्याः–पंचातोज्ञानदर्शनः ॥
चारित्रेभ्यो नमोमध्ये, ह्रींसांतः समलंकृतः ॥१०॥
ॐ ह्रॉं ह्रीं ह्रुं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा ॥
सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रेभ्यो नम· (मूलमत्र)
जम्बूवृक्षधरोद्वीप.–क्षारोदधिसमावृतः ॥
अर्हदाद्यष्टकैरष्ट काष्ठाधिष्ठैरलंकृत· ॥ ११ ॥
तन्मध्यसगतो मेरु, कूटलक्षैरलंकृत·, ॥
उच्चैरुच्चैस्तरस्तार, स्तारामंडलमंडितः ॥ १२ ॥
तस्योपरि सकारांत,–बीजमध्यास्य सर्वगं ॥
नमामि बिंबमार्हंत्यं,–ललाटस्थं निरंजन ॥ १३ ॥
अक्षयं निर्मलं शांत, बहुल जाड्यतोज्झितं ॥
निरीहं निरहङ्कारं, सारं सारतरं घन ॥ १४ ॥

अनुद्धत शुभ स्फीत–सात्विक–राजस–मत॥
तामस चिरसवुद्ध,–तैजस शर्वरीसम ॥ १५ ॥

साकार च निराकार, सरस विरसं परं ॥
परापर परातीत,–परम्पर परापरं ॥ १६ ॥

एकवर्णं द्विवर्णं च, त्रिवर्णं तुर्यवर्णकं, ॥
पञ्चवर्णं महावर्णं, सपरं च परापरं ॥१७॥

सकल निष्कल तुष्ट, निर्वृत भ्रांतिवर्जित ॥
निरञ्जन निराकारं, निर्लेप वीतसश्रय, ॥ १८ ॥

ईश्वरं ब्रह्मसवुद्ध, वुद्ध सिद्ध मत–गुरु ॥
ज्योतीरूप महादेव, लोकालोकप्रकाशक ॥ १९ ॥

अर्हदाख्यस्तु वर्णान्त सरेफो विन्दु मडित
तुर्यस्वरसमायुक्तो, वहुधा नादमालित ॥ २० ॥

अस्मिन वीजे स्थिता सर्वे,–ऋषभाद्या जिनोत्तमा ।
वर्णे निर्जैनिर्जैयुक्ता ध्यातव्यास्तत्र सगता ॥२१॥

नादश्चन्द्रसमाकारो, विन्दुर्नीलसमप्रभ ॥
कलारुणसमासान्त , स्वर्णाभ सर्वतोमुख ॥२२॥

शिर.संलीन ईकारो, विलीनो वर्णत. स्मृत. ॥
वर्णानुसारसलीनं, तीर्थङ्करमडलं स्तुम ॥ २३ ॥

चन्द्रप्रभपुष्पदन्तौ, नादस्थितिसमाश्रितौ ॥
बिन्दुमध्यगतौ नेमिसुव्रतौ जिनसत्तमौ ॥ २४ ॥

पद्मप्रभवासुपुज्यौ, कलापदमधिष्ठितौ ॥
शिरईस्थितिसंलीनौ, पार्श्वमल्लिजिनोत्तमौ ॥ २५ ॥

शेषास्तीर्थंकृत सर्वे,—हरस्थाने—नियोजिता ॥
मायावीजाक्षर प्राप्ताश्चतुर्विशतिरर्हतां ॥ २६ ॥

गतरागद्वेषमोहा , सर्वपापविवर्जिता ॥
सर्वदा सर्वकालेषु,—ते भवन्तु जिनोत्तमा ॥२७॥

देवदेवस्य यच्चक,—तस्य चक्रस्य या प्रभा ॥
तया छादितसर्वांग,—मा—मां—हिनस्तु डाकिनी २८

देवदेवस्य यच्चक, तस्य चक्रस्य—या—प्रभा ॥
तया छादितसर्वांग,—मा—मां—हिनस्तु राकिनी २९

देवदेवस्य यच्चकं, तस्य चक्रस्य—या—प्रभा ॥
तया छादितसर्वांगं,—मा—मां—हिनस्तु लाकिनी ३०

कामाङ्गा कामवाणा च,-सानदानंदमालिनी ॥
माया मायाविनी रौद्री,-कला-काली-कलिप्रिया ४७
एता सर्वा महादेव्यो,-वर्त्तन्ते-या-जगत्रये ॥
मह्य सर्वा प्रयच्छन्तु,-कान्ति कीर्त्ति घृतिं मतिं ४८
दिव्यो गोप्य स दु प्राप्या -श्रीऋपिमडलस्तव ॥
भापित स्तीर्थनाथेन,-जगत्राणकृतेनघ ॥ ४९ ॥
रणे राजकुले वन्हौ,-जले दुर्गे गजे हरौ ॥
श्मशाने विपिने घोरे,-स्मृतो रक्षतु मानव ॥५०॥
राज्यभ्रष्टा निज राज्य,-पदभ्रष्टा निजपद ॥
लक्ष्मीभ्रष्टा निजा लक्ष्मीं,-प्राप्नुवन्ति-न सशय ५१
भार्यार्थी लभते भार्या, पुत्रार्थी लभते सुत,
वित्तार्थी लभते वित्त, नर स्मरणमात्रत ॥५२॥
स्वर्णे रुप्ये पट्टे कास्ये,-लिखित्वा यस्तु पुज्यते ॥
तस्यैवाष्टमहासिद्धि, गृहे वसति शाश्वती ॥५३॥
भूर्जपत्रे लिखित्वेद -गलके मूर्ध्नि-वा-भुजे ॥
धारित सर्वदा दिव्य-सर्वभीतिविनाशक ॥५४॥

ऋषि मंडल-स्तोत्र-भावार्थ

आद्यताक्षरसलक्ष्यमक्षरं, व्याप्य यत्स्थितं ॥
अग्निज्वालासम नाद विन्दुरेखासमन्वित ॥ १ ॥

भावार्थ—अक्षरोंके आदिका अक्षर (अ) और अक्षरोंके अंतका अक्षर (ह) इन दोनो अक्षरोंके बीचमें स्वर व्यजन के सब अक्षर आजाते हैं। इन अक्षरोंको लिखकर अन्त्याक्षर (ह) को अग्निज्वाला जो कि रकारमें मानी गई है (र) उसमें मिलाना ओर उसके मस्तक उपर अर्धचन्द्राकार चिन्ह कर विन्दु सहित करना इस तरह करनेसे (अर्हं) बनता है।

अग्निज्वालासमाकान्त-मनोमलविशोधक ॥
देदीप्यमान हृत्पद्मे,-तत्पद नौमिनिर्मल ॥ २ ॥

भावार्थ—अर्हं शब्द अग्निज्वालाके समान प्रकाशमान है, और मनके मैलको अलग करनेवाला है, जिससे यह देदीप्यमान है, अत एसे परमपद अर्हं को हृदयकमलमें स्थापित कर निर्मल चित्तसे मन वचन कायाकी एकाग्रतासे अर्हं को नमन करता हू।

अर्हमित्यक्षरं ब्रह्मवाचक परमेष्ठिन ॥
सिद्धचक्रस्य सद्बीज-सर्वत प्रणिदध्महे ॥ ३ ॥

श्री सिद्धचक्र मंडल



अर्हमित्यक्षरं ब्रह्मवाचकं परमेष्ठिनः ॥
सिद्धचक्रस्य सद्बीजं सर्वतः प्रणिदध्महे ॥
॥ ऋषिमंडल ॥

[illegible] श्री [illegible] अमदावाद

भावार्थ—अर्हं शब्द ब्रह्मवाचक है, और पाच परमेष्टि-रुप सिद्धचक्रका सद्बीज है; जिसको सर्व प्रकारसे नमस्कार करता हूं।

ॐ नमोर्हद्भ्य ईशेभ्यः ॐ सिद्धेभ्यो नमोनमः
ॐ नमःसर्वसूरिभ्यः उपाध्यायेभ्य ॐ नम. ॥४॥

भावार्थ—ॐ के साथ श्री अर्हंन् भगवान-ईश्वर-सिद्ध भगवान सर्व आचार्य महाराज व उपाध्याय महाराजको वंदन करता हू।

ॐ नम. सर्व साधुभ्य ॐज्ञानेभ्यो नमोनम. ॥
ॐ नम.स्तत्वदृष्टिभ्यश्चारित्रेभ्यस्तु—ॐ नमः ॥५॥

भावार्थ—सर्व साधू महाराज सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान व तत्वदृष्टि वाले सम्यक् चारित्र को वन्दन करता हू।

श्रेयसेस्तु श्रियेस्त्वेतदर्हदाद्यष्टकं शुभ ॥
स्थानेष्वष्टसु विन्यस्तं, पृथग्बीज समन्वितं ॥६॥

भावार्थ—अर्हन्त आदि आठों पद श्रेयके करने वाले हैं, जिनकी बीजाक्षर सहित आठों दिशामें स्थापना की जाती है, जो कल्याणकारी—सुख सौभाग्य और लक्ष्मी सम्पादन कराने वाले हों।

आद्यं पदं शिखां रक्षेत्, परं रक्षतु मस्तकं ॥
तृतीयं रक्षेन्नेत्रे द्वे,—तुर्यं रक्षेच्च नासिकां ॥

भावार्थ—पहिला अर्हत पद शिखाकी रक्षा करो, दूसरा सिद्धपद मस्तक की रक्षा करो, तीसरा आचार्यपद दोनो नेत्रोंकी रक्षा करो, और चौथा उपाध्याय पद नासिकाकी रक्षा करो।

पंचम तु मुख रक्षेत्,—षष्ट रक्षेच्च घटिकां॥
नाभ्यत सप्तम रक्षेद्रक्षेत् पादातमष्टम ॥ ८॥

भावार्थ—पाचवा साधूपद मुँहकी रक्षा करो, छठा ज्ञानपद कण्ठकी रक्षा करो, सातवा सम्यग् दर्शनपद नाभिकी रक्षा करो, और आठवा चारित्रपद चरणकी रक्षा करो।

पूर्वप्रणवत सात सरेफो लब्धिपचखान् ॥
सताष्टदशसूर्यकान्—श्रितो विन्दुस्वरान् पृथक्॥९॥

भावार्थ—प्रथम प्रणव अक्षर ॐ को लिख कर बादमे सकारात–अत के अक्षर "ह" को रेफ सहित लिखना और उसके उपर स्वराक्षर की मात्रा लगावे, जैसे आ की मात्रा, ई की मात्रा, उ की मात्रा ऊ की मात्रा, ए की मात्रा, ऐ की मात्रा, औ. की मात्रा को, अनुस्वार सहित लिखे और अ: की मात्रा भी लिखे जिस से, ह्रॉं ह्रीं. ह्रुं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रौं. ह्रः बन जाता है।

पूज्यनामाक्षरा आद्या--पंचातोज्ञानदर्शन ॥
चारित्रेभ्यो नमोमध्ये, ह्रींसांत. समलं कृतः ॥१०॥

भावार्थ—बीजाक्षर के बाद पचपरमेष्टि नामके प्रथम अक्षर अ, सि, आ, उ, सा, लिखे ओर उनके आगे सम्यग् दर्शन ज्ञान चारित्रेभ्यो नमः लिख कर चारित्रेभ्यो व नमः के बीचमें ह्रीं लिखे, इस तरह लिखनेसे सत्ताइस अक्षरका मूल मत्र बन जाता है। इस मत्रके आद्यमें ॐ प्रणव अक्षर लगता है, क्यों कि प्रणव अक्षर शक्तिशाली है, और मत्रको बलवान बनाने वाला है। इसी कारणसे सत्ताइस अक्षरोंके पहले ॐ लगाना चाहिये, और मत्र शास्त्रके नियमानुसार इस ॐ अक्षरकी गीनती इस मत्रके अक्षरोंके साथ नही की गई।

जम्बूवृक्षधरोद्वीप--क्षारोदधिसमावृत. ॥
अर्हदाद्यष्टकैरष्ट काष्ठाधिष्ठैरलकृत ॥ ११ ॥

भावार्थ—जम्बूवृक्ष को धारण करने वाला द्वीप जिस को जम्बूद्वीप कहते हैं। जिसके चारों तरफ लवण समुद्र है, एसा जो जम्बूद्वीप है वह आठों ही दिशा के स्वामी अर्हत् सिद्ध आदि से शोभायमान हो रहा है।

तन्मध्यसंगतो मेरु, कूटलक्षैरलकृत, ॥
उच्चैरुच्चैस्तरस्तार, स्तारामडलमंडित. ॥ १२ ॥

भावार्थ—उसके मध्यभाग में मेरु पर्वत है और वह कयैक कूटों से शोभायमान हो रहा है, उस मेरुपर्वत के ज्योतिष चन्द्र परिक्रमा देते हैं जिससे और भी शोभायमान है।

तस्योपरि सकारांत,—बीजमध्यास्य सर्वग ॥
नमामि बिंबमार्हंत्य,—ललाटस्थ निरंजन ॥१३॥

भावार्थ—मेरु पर्वत के उपर सकारात बीज अक्षर ह्रीं की स्थापना करे, और उसमें सर्वज्ञ भगवान जिन्होंने कर्मों को नाश कर दिये हैं, एसे अर्हत् भगवान को ललाट में स्थापित करके वन्दन नमन कर ध्यान करे।

अक्षय निर्मल शात, बहुल जाड्यतोज्झित ॥
निरीहं निरहङ्कारं, सारं सारतरं घन ॥ १४ ॥

भावार्थ—अर्हत् भगवानका बिंब अक्षय, अर्थात् कर्ममलसे रहित-निर्मल-शान्तताके विस्तारवाला अज्ञानसे रहित है और जिसमें किसी तरहका अहकार नही है, एसा श्रेष्ट-अत्यन्त श्रेष्ट बिंब है।

अनुद्धत शुभ स्फीत—सात्विक—राजस—मत ॥
तामस चिरसबुद्ध,—तैजस शर्वरीसम ॥ १५ ॥

भावार्थ—उद्धताई हठवाद से रहित है, शुभ-स्वच्छ-एवस्फटिक जैसा निर्मल है। चौदहराज लोकके मालिक होनेसे राजस गुणवाला है। आठों कर्ममलका नाश करनेमें

तामसी वृत्तिवाला है, ज्ञानवान तेजवान जिस तरह पूनमके चाँदसे रात्री शोभायमान दीखती है. तदनुसार तेजस्वी अज्ञान-अंधकारका नाश करनेवाला आनन्दकारी जिनबिंब है।

साकारं च निराकारं, सरसं विरस परं ॥
परापरं परातीत,-परम्पर परापरं ॥ १६ ॥

भावार्थ—अर्हत् भगवानका बिंब होनेसे साकार है। अर्हत् सिद्धपद पा चुके हैं इस लिये मोक्षकी अपेक्षा निराकारभी है। सम्यग् ज्ञानदर्शनसे परिपूर्ण रसमय हैं, किन्तु रागद्वेषादि रसोंसे रहित हैं, और उत्कृष्ट है।

एकवर्णं द्विवर्णं च, त्रिवर्णं तुर्यवर्णकं, ॥
पञ्चवर्णं महावर्णं, सपरं च परापरं ॥ १७ ॥

भावार्थ—वह एक वर्ण दोवर्ण, तीनवर्ण चारवर्ण और पाचवर्ण वाला अर्थात् श्वेत, लाल, पीला, नीला, और श्यामवर्णवाला है। ह्रीं बीजाक्षर पाचवर्णवाला है और हकार भी अति श्रेष्ठ है।

सकलं निष्कल तुष्ट, निभृतं भ्रांतिवर्जितं॥
निरञ्जन निराकारं, निर्लेप वीतसश्रयं, ॥ १८ ॥

भावार्थ—अर्हत् भगवानकी अपेक्षा स-कल अर्थात् शरीर सहित साकार है। निष्कल-अर्थात् सिद्धभगवानकी

अपेक्षा शरीर रहित निरजन निराकार है, सतोप प्राप्त क-रानेवाला जिन्होने भवभ्रमणका अत करदिया है एसे निरजन निराकाशी–जिनको किसी प्रकारकी इच्छा नही है, निर्लेप सशय रहित एसा जिनबिंब है ।

ईश्वर ब्रह्मसबुद्ध, बुद्ध सिद्ध मतं–गुरु ॥
ज्योतीरुपं महादेव, लोकालोकप्रकाशकं ॥ १९ ॥

भावार्थ—उपदेश देनेवाले हैं, तीन लोकके नाथ हैं इसलिये ईश्वर है। आत्माका स्वरुप बताने वाले हैं इसलिये ब्रह्मरुप है, बुद्धरुप हैं, दोप रहित हैं, शुद्ध हैं, ज्योतिरुप हैं, देवोंसे पुजित–महादेव हैं, और लोक अलोकको निजके ज्ञानसे प्रकाशित करनेवाले एसे परमब्रह्म परमात्माका ध्यान करना चाहिए ।

अर्हदाख्यस्तु वर्णान्त सरेफो बिन्दु मडित
तुर्यस्वरसमायुक्तो, बहुधा नादमालित ॥ २० ॥

भावार्थ—अर्ह शब्दका वाचक वर्णके अंतका अक्षर हकार है, और रेफ व बिन्दुसे शोभायमान है, और चौथा अक्षर स्वरका "ई" से अलकृत है, जिस को मिलानेसे ध्यान करने योग्य "ह्रीँ" अक्षर बनता है।

ह्रीं मे चौवीस जिन स्थापना



अर्हदाख्यस्तु वर्णान्त सरफो बिन्दु मंडितः ॥
तुर्यस्वरसमायुक्तो, बहुधा नादमालित. ॥
॥ ऋषिमंडल ॥

अस्मिन वीजे स्थिता सर्वे,-ऋषभाद्या जिनोत्तमा.।
वर्णैर्निजैर्निजैर्युक्ता ध्यातव्यास्तत्र संगता· ॥२१॥

भावार्थ—इस तरहके "ह्रीं" वीजा अक्षरमें ऋषभदेव आदि चौवीसही तीर्थंकर विराजे हुवे हैं जो जिस वर्णमें विराजित हैं उस वर्णके अनुसार ध्यान करना चाहिये।

नादश्चन्द्रसमाकारो, विन्दुर्नीलसमप्रभ· ॥
कलारुणसमासान्त., स्वर्णाभः सर्वतोमुख· ॥२२॥
शिरःसंलीन ईकारो, विलीनो वर्णत स्मृत· ॥
वर्णानुसारसंलीन, तीर्थकृन्मंडलं स्तुम· ॥ २३ ॥
युग्मम् ।

भावार्थ—इस वीज अक्षरकी नादकला अर्धचन्द्राकार है, और वह श्वेतवर्णकी होती है, उसमें जो विन्दु होता है उसका रंग काला है। मस्तककी कला लाल रंगकी होती है, और "ह" कार पीले वर्णवाला है, "ई" कार नीले वर्ण वाला है, इस तरहके "ह्रीं" में चौवीस तीर्थंकरोंकी रंगके अनुसार स्थापनाकी गई है।

चन्द्रप्रभौपुष्पदन्तौ, नादस्थितिसमाश्रितौ ॥
विन्दुमध्यगतौ नेमिसुव्रतौ जिनसत्तमौ ॥ २४ ॥

भावार्थ—चन्द्रप्रभु और पुष्पदंत इन दोनो तीर्थंकर भग-

धानकी स्थापना अर्धचन्द्राकार जो नादकला है उसमें करना चाहिये। बिन्दुके मध्यमें तीर्थंकर नेमिनाथ और मुनिसुव्रत स्वामीकी स्थापना करना।

पद्मप्रभवासुपुज्यों, कलापदमधिष्ठतों ॥
शिरईस्थितिसल्लीनो, पार्श्वमल्लिजिनोत्तमो॥ २५ ॥

भावार्थ—पद्मप्रभु और वासुपुज्य स्वामीको मस्तक अर्थात् कलाके स्थानमें स्थापित करना। पार्श्वनाथ व मल्लि-नाथ भगवानको "ई" कारमें स्थापित करना।

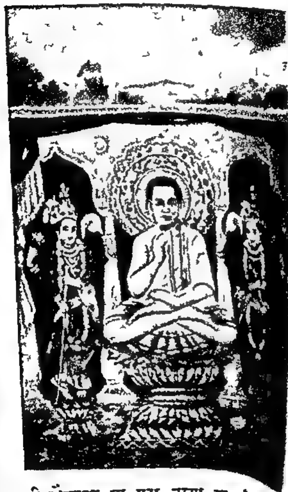
शेपास्तीर्थंकृत सर्वे,–हरस्थाने–नियोजिता ॥
मायाबीजाक्षर प्राप्ताश्चतुर्विंशतिरर्हता ॥ २६ ॥

भावार्थ—शेष सोलह तीर्थंकर भगवानको रकार हकार के जो वर्ण है, उनके मध्यभागमें लिखे। इस तरह चौबीस जिनदेव माया बीज जो "ह्रीं" कार है उसमें स्थापित करे।

गतरागद्वेपमोहा, सर्वपापविवर्जिता ॥
सर्वदा सर्वकालेषु,–ते भवन्तु जिनोत्तमा ॥२७॥

भावार्थ—चौबीसों जिन भगवान रागद्वेप और मोहसे रहित हैं, सर्व प्रकारके पापोंसे वचित हैं एसे जिन भगवान सर्वदा सर्व कालमें प्राप्त होवें।

॥ श्री गणधर गौतम स्वामी ॥



श्री गौतमस्य–या–मुद्रा, तस्या–या–[illegible]

॥ [illegible]

फार्नाम श्री रसम अमदावाद

देवदेवस्य यच्चक्रं,—तस्य चक्रस्य या प्रभा ॥
तया छादितसर्वांगं,—मा—मां—हिनस्तु डाकिनी २८

भावार्थ—देवोंके भी देव ऐसे तीर्थंकर भगवान जिनके चक्र अर्थात् समूहकी प्रभासे मेरा शरीर आच्छादित है, अतः मेरे शरीरको डाकिनी किसी प्रकारकी भी पीड़ा मत करो।

इस तरहके तेरह श्लोक है जिनका अर्थ इसी श्लोक के अनुसार है, सिर्फ डाकिनी के नामकी जगह दूसरे नाम आये हैं सो अर्थका विचार करते समझ लेना चाहिये। (२८ से ४१ श्लोक तक)

श्रीगौतमस्य—या—मुद्रा, तस्या—या-भुविलब्धयः ॥
ताभिरभ्युद्यतज्योतिरर्हं सर्वनिधीश्वरः ॥ ४२ ॥

भावार्थ—श्री गौतमस्वामी गणधर भगवान जो लब्धिवानथे, जिनकी लब्धि भूमिपर फैल रही है, जिनकी लब्धिरूप ज्योतिसे भी अत्यन्त प्रकाशमान ज्योति तीर्थंकर भगवानकी है और वह तमाम प्रकारकी निधिका भण्डार है।

पातालवासिनो देवा —देवा—भूपीठवासिनः ॥
स्वर्वासिनोपि—ये देवा —सर्वेरक्षन्तु—मामितः

भावार्थ—पाताल में रहने वाले देव, पृथ्वीपर रहने वाले देव, व्यन्तर व स्वर्गमें रहनेवाले विमानवासी देव सब मेरी रक्षा करो।

येवधिलब्धो—ये—तु—परमावधिलब्धय ॥
ते सर्वे मुनयो देवा—मा—सरक्षंतु सर्वदा ॥४४॥

भावार्थ—अवधिज्ञान और परमावधि ज्ञानकी लब्धि वाले सब मुनिराज सर्वदा मेरी रक्षा करो।

दुर्जना भूतवैताला, पिशाचा मुद्गलास्तथा ॥
ते सर्वेप्युपशाम्यन्तु,—देवदेवप्रभावत ॥४५॥

भावार्थ—दुर्जन मनुष्य भूत प्रेत वैताल पिशाच राक्षस-दैत्य आदि श्री जिनेश्वर भगवानके प्रसादसे शांत होवें।

ओं ह्रीं श्रीश्च धृतिर्लक्ष्मी,—गोरी चण्डी सरस्वती।
जयाम्बा विजया नित्या, क्लिन्नाजितामदद्रवा ॥४६॥
कामाङ्गा कामवाणा च,—सानदानंदमालिनी ॥
माया मायाविनी रौद्री,—कला-काली-कलिप्रिया ४७

भावार्थ—इन दोनो श्लोकोंमें चौवीस देवीयोंके नाम बताये गये हैं। (१) ह्रीं देवी, (२) श्रीं देवी, (३) धृति, (४) लक्ष्मी, (५) गौरी, (६) चंडी, (७) सरस्वती, (८) जया, (९) अंबीका, (१०) विजया, (११) क्लिन्ना, (१२)

अजिता, (१३) नित्या, (१४) मदद्रवा, (१५) कामागा, (१६) कामवाणा, (१७) सानदा, (१८) आनन्दमालिनी, (१९) माया, (२०) मायाविनी, (२१) रौद्री, (२२) कला, (२३) काली, (२४) कलिमिया, इस तरह चौवीस देवीयोंके नाम बताये गये है ।

एता.सर्वा महादेव्यो,—वर्त्तन्ते—या—जगत्रये ॥
मह्य सर्वा प्रयच्छन्तु,-कान्ति कीर्त्ति घृति मति ४८

भावार्थ—इस तरह चौवीसही देवीया जो जैन शासनकी अधिष्ठायिका है, और तीन लोकमें जिनका निवास है, वह देवीया मुझे कान्ति, लक्ष्मी, कीर्ति, धैर्यता, और बुद्धिको प्रदान करे ।

दिव्यो गोप्य [redacted] दु:प्राप्या —श्रीऋपिमडलस्तव ॥
भापित स्तीर्थनाथेन,—जगत्राणकृतेनघ ॥ ४९ ॥

भावार्थ—श्री तीर्थंकर भगवान फरमाते है कि, यह ऋपिमडल स्तोत्र वहुत दिव्य-तेजस्वी है, और बहुत मुश्किलसे मिलता है, इसे गुप्त रखना चाहिये यह मानवकी रक्षा करनेवाला है ।

रणे राजकुले वन्हो,—जले दुर्गे गजे हरौ ॥
श्मशाने विपिने घोरे,—स्मृतो रक्षतु मानवं ॥५०॥

भावार्थ—युद्धमें राजदरवारमें अग्निके भयमें जलके उपद्रवमें किलेमें हाथी व सिंह के भयमें स्मशान भूमि निर्जन वनखड स्थानमे भय प्राप्त हुवा हो वहा इस स्तोत्रमंत्रके स्मरण मात्रसे मनुष्यकी रक्षा होती है।

राज्यभ्रष्टा निज राज्य,—पदभ्रष्टा निजपदं ॥
लक्ष्मीभ्रष्टा निजां लक्ष्मीं,—प्राप्नुवन्ति-न-संशय ५१

भावार्थ—राजपदसे अलग होनेवालेको निजका राज पद, पदवीसे भ्रष्ट होनेवालेको निजकी पदवी, और जिनकी लक्ष्मी चली गई होय उन पुरुषोंको निजकी लक्ष्मी प्राप्त होती है इसमें किसी प्रकारका सदेह नही है।

भार्यार्थी लभते भार्या, पुत्रार्थी लभते सुत,
वित्तार्थी लभते वित्त, नर स्मरणमात्रत ॥५२॥

भावार्थ—स्त्रीके इच्छुकको स्त्री पुत्रकी लालसा वालेको पुत्र, धनके अर्थीको धनकी प्राप्ती इस स्तोत्रके स्मरण मात्रसे हो जाती है।

स्वर्णे रुप्ये पट्टे कास्ये,—लिखित्वा यस्तु पुज्यते ॥
तस्यैवाष्टमहासिद्धि, गृहे वसति शाश्वती ॥५३॥

भावार्थ—इस ऋषिमंडल स्तोत्रके यत्रको सोनेके, चादीके तांबेके अथवा कासीके पतडे पर लिख कर पुजन

किया करे तो उस मनुष्यके घरमें आठ प्रकारकी सिद्धि हमेशाके लिये निवास करती है।

भूर्जपत्रे लिखित्वेदं —गलके मूर्ध्नि—वा—भुजे॥
धारितं सर्वदा दिव्यं—सर्वभीतिविनाशकं ॥ ५४ ॥

भावार्थ—इस स्तोत्रके यत्रको भोजपत्र पर लिख कर गलेमें या चोटी याने शिखाके बाध देवे या हाथकी भुजाके बाधे तो सर्व प्रकारके भय मिट जाते हैं और आपत्तिका नाश होता है।

भूतै प्रेतैर्ग्रहैर्यक्षै -पिशाचैर्मुद्गलैर्मलै ॥
वातापित्तकफोद्रेकै,-र्मुच्यते नात्र सशय ॥५५॥

भावार्थ—भूत प्रेत ग्रह गोचर यक्ष पिशाच राक्षस और वात पित्त कफ आदिसे जो पीडा होनेवाली हो उससे बच जाता है इसमें किसी प्रकारका सदेह नही है।

भूर्भुव स्वस्त्रयीपीठ-वर्त्तिन॰ शाश्वता जिना॰ ॥
तैः स्तुतैर्वदितैर्दृष्टै, र्यत्फलं तत्फलं श्रुतौ॥५६॥

भावार्थ—तीनो लोक याने (१) अधोलोक, (२) मध्य लोक, और (३) उर्ध्व लोक एसे तीनो लोकमे जो शाश्वता जिन चैत्य हैं उनकी स्तुति वन्दना आदिसे जो फल मिलता है, उसी तरहका लाभ इस स्तोत्रका पाठ करनेसे होता है।

एतद्गोप्य महास्तोत्र, न देय यस्य कस्यचित् ॥
मिथ्यात्ववासिने दत्ते, वालहत्या पदे पदे ॥५७॥

भावार्थ—इस स्तोत्रको गुप्त रखना चाहिए, हर एक मनुष्यको नही देवे (योग्यता देखकर देना) मिथ्या दृष्टि वालेको देनेसे पद पद पर बालहत्याके तुल्य पाप लगता है। (अर्थात् अयोग्य पुरुष इस स्तोत्र-मंत्रकी सिद्धि प्राप्त करे तो अनर्थ आदिका भय रहता है।)

आचाम्लादितप कृत्वा, पूजयित्वा जिनावलीं ॥
अष्टसाहस्त्रिको जाप कार्यस्तत्सिद्धिहेतवे ॥५८॥

भावार्थ—आयविलकी तपस्या करके जिनेन्द्र भगवानकी अष्ट द्रव्यसे पूजा करे और इस मंत्रका आठ हजार जाप करे तो कार्य सिद्ध हो जाता है।

शतमष्टोतरं प्रात,—र्ये पठन्ति दिनेदिने ॥
तेषा न-व्याधयो देहे,—प्रभवन्ति न चापद ॥५९॥

भावार्थ—जो मनुष्य इस स्तोत्रके मंत्रकी एक माला अर्थात् एकसो आठ जाप नित्य-प्रति प्रात.कालमें करते है उनमें किसीभी तरहकी व्याधि उत्पन्न नही होती और सारी आपत्तिया टल जाती है।

अष्टमासावधिं यावत्,—प्रात प्रातस्तु य पठेत् ॥
स्तोत्रमेतत्महास्तेजो,—जिनबिंब स पश्यति ॥६०॥

भावार्थ—आठ महिने पर्यंत प्रातःकालमे विधि सहित इस स्तोत्रका पाठ करे तो अर्हत् भगवानके बिंबका दर्शन ललाटमें कर लेता है।

दृष्टे सत्यर्हतो बिंबे,-भवेत्सप्तमके ध्रुवं ॥
पदमाप्नोति शुद्धात्मा,-परमानन्दनन्दित. ॥ ६१ ॥

भावार्थ—इस तरह जिस पुरुषको अर्हन् भगवानके बिंबके दर्शन हो जाते हैं, वह जीव सातवें भवमें मोक्ष पाता है, और मोक्ष स्थान परम आनन्दके देनेवाला है, अर्थात् जन्म जरा मृत्युसे रहित है।

विश्ववंद्यो भवेत् ध्याता,-कल्याणानि च सोश्नुते ॥
गत्वा स्थान परं सोपि-भूयस्तु-न-निवर्तते ॥६२॥

भावार्थ—ससारके पुजनीय जो ध्याता पुरुष होते हैं उनहीका ध्यान किया जाता है, जो कल्याणके करनेवाला होता है, और जिनके ध्यान मात्रसे मोक्ष मिलती है और ससारका परिभ्रमण मिट जाता है।

इद स्तोत्रं महास्तोत्रं-स्तुतीनामुत्तमं परं ॥
पठनात्स्मरणाज्जापात्-लभ्यते पदमुत्तमं ॥ ६३ ॥

भावार्थ—यह स्तोत्र साधारण नही है, यह तो महास्तोत्र है, जिसकी स्तुति-स्मरण-पाठ आदि करनेसे उत्तम पदकी प्राप्ती होती है, जिससे मोक्ष सुख मिलता है।

ऋषिमंडल यंत्र बनानेकी तरकीब



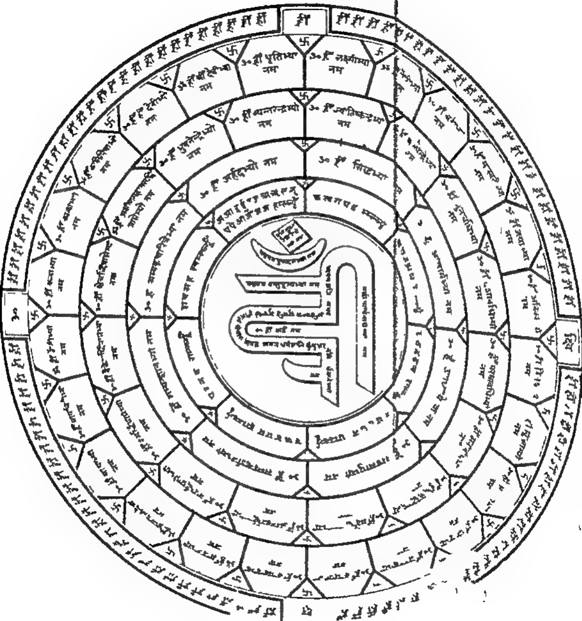
ऋषि मडल यत्र बनवाना हो तो पहिले अच्छा दिन, शुभ महूर्त देख लेना चाहिए, और जब निजका चन्द्रस्वर चलता हो तब यत्रको बनानेकी शुरुआत करे। यत्र सोनेके, चादीके, तांबेके, कासीके अथवा सर्व धातुके मिश्रणवाले पतडे पर जैसी जिसकी शक्ति हो तैयार करे।

पतडेको एकसा गोलाकार बनवा कर सफाई वाला करालेवे और बादमें उस पतडे पर जहा तक हो सके अष्ट गधसे यत्र लिखे। अष्ट गध पवित्रतासे बनाया हुवा हो और जिसमें निचे लिखे अनुसार वस्तुओंका मिश्रण होना चाहिए।

(१) केसर, (२) कस्तूरी, (३) अगर, (४) गौरोचन (६) भीमसेनी कपूर (७) चदन (८) हिंगलु। इन सब को खरलमें तैयार कर लेवे।

जब यत्र को लिखना शुरू करे तब तेले की तपस्या करना चाहिए। यदि तेला न हो सके तो आँबिल्की तपस्या तो अवश्य करना चाहिए और यत्र लिखते समय श्री सिद्ध चक्र मडल्की स्थापना कर अष्टद्रव्यसे पुजा कर पूर्व दिशाकी तरफ मुख रख कर मौन पने रह कर यत्र लिखता जाय।

ऋषिमडल–यन्त्र



लनेकी कल्म अथवा निज सोनेका होतो अत्युत्तम है यदि
ी कल्म न मिल सके तो बरकी कल्मसे लिखना चाहिए।
हेके निब–टाकसे नही लिखना चाहिए और जिस कल्मसे
खा जाय वह बिल्कुल नई होनी चाहिए।

यन्त्र जब तैयार हो जाय तब शुद्धताके लिये ठीक तरह
मका मिलान करलेना चाहिए ताकि ह्रस्व दीर्घ अनुस्वार
ादिकी अशुद्धता न रहने पावे। जब निश्चय हो जाय कि
त्र यथा विधि अनुसार लिखा गया है और किसी प्रकारकी
शुद्धता नही है, एसा निश्चय हो जाने बाद यन्त्रके उपर जो
क्षर पक्ति लिखी गई है उसे मेखसे या टाकलेसे या और
ोई अणीदार औजार हो उससे खोद लेवे और एकसा
पष्ट अक्षर दिखाई दे सके उस तरह तैयार कर लेवे औजार
हा तक हो सके ताबेका लिया जाय यदि एसा न मिल
सके तो लोहेका नया औजार काममे लेना चाहिए, इस
रह जब यन्त्र शुद्धमान तैयार हो जाय और किसी तरहकी
भूल उसमें न रहे तो फिर यन्त्रको पूजने योग्य बनानेके हेतु
यातो किसी जगह प्रतिष्ठा होती हो वहाँ लेजाकर या स्वय
खर्च कर प्रतिष्ठित करालेवे यदि दोनों बातोंमेसे एकभी न
हो सके और साधन करनेकी जल्दी हो तो आत्मार्थी योग्य
मुनि महाराजके पास ले जाकर वासक्षेप प्रक्षेप करा लेवे।
मुनिराज यदि मन्त्र शास्त्रमें निपुण होंगे तो वासक्षेप डालते,

ह्रीँ कार के उपर अर्ध चन्द्राकार जो चिन्ह है वह सफेद कला युक्त माना गया है, क्योंकि चन्द्रकला सफेद होती है इस लिये उसमें श्वेत वर्ण वाले तीर्थङ्कर भगवान का नाम लिखना चाहिए। अतः इस तरह से लिखे।

॥ चंद्रप्रभ पुष्पदंतेभ्यो नमः ॥

इस तरह लिखे बाद चन्द्राकार कला के उपर जो बिन्दु श्याम वर्ण वाला बयान किया गया है इस लिये बिन्दु में श्याम वर्ण वाले तीर्थङ्कर का नाम इस तरह लिखे।

॥ मुनिसुव्रत नेमिनाथेभ्यो नमः ॥

इस तरह लिखे बाद ह्रीँ कारके सिरे की लाइन जो मस्तक पर होती है वह लाल वर्ण की बताई गई है इस लिये उसमें लाल वर्ण वाले तीर्थङ्कर का नाम इस तरह लिखे।

॥ पद्मप्रभ वासुपूज्येभ्यो नमः ॥

ऐसा लिख लेने बाद ह्रीँ का दीर्घ ईकार याने ई की मात्रा जिसका हरा रंग बताया गया है अतः हरे वर्ण वाले तीर्थङ्कर का नाम इस तरह लिखे।

॥ मल्लि पार्श्वनाथेभ्यो नमः ॥

इस तरह लिख लेने बाद बाकी रहा हुवा ह्रीँ कारका विभाग जो हकार रकार है, वह पीले वर्णका बताया है

इस लिये स्वर्ण वाले सोलह तीर्थङ्कर भगवान के नाम इस तरह लिखे।

ऋषभ अजित सभव अभिनन्दन
सुमति सुपार्श्व शीतल श्रेयांस
विमल अनत धर्म शांति कुथु
अर नमि वर्द्धमानेभ्यो नम

ऐसा लिखे बाद पुरा ह्रीं कार तैयार हो जाता है, बाद में ह्रीं कार के बीचमे जो जगह रहती है उसमे इस तरह बीज अक्षर लिखना चाहिये।

॥ ॐ ह्रीं अर्हं नम ॥

उपरोक्त कथनानुसार लिखे बाद पूरा ह्रीं कार तैयार हो गया समझना चाहिए।

(२) दूसरा गोलाकार ह्रींकार के चारों तरफ बनावे जिसमें बराबरी के आठ कोठे रखे उन आठों कोठों में इस तरह लिखना शुरु करे।

ह्रीं कार अर्द्ध चन्द्राकार पर जो बिन्दु है उस के उपर से प्रथम लिखने की शुरुआत करे।

(१) पहले कोठे में अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः ह्रम्ल्व्र्यूं।

(२) दूसरे कोठे में क ख ग घ ङ स्वाहा

(३) तीसरे कोठे में च छ ज झ ञ स्वाहा

(४) चौथे कोठे में ट ठ ड ढ ण स्वाहा

(५) पाचवे कोठे में त थ द ध न स्वाहा

(६) छट्ठे कोठे म प फ ब भ म स्वाहा

(७) सातवें कोठे में य र ल व स्वाहा

(८) आठवें कोठे में श,ष स ह स्वाहा

उपर बताये अनुसार आठों कोठे में लिखे. और साथ ही तीसरा गोलाकार मडल का [illegible] रेखा बनावे और दूसरे मडल मे जहा से अ आ स्वाहा लिखा है उसके उपर से ही तीसरे मडल के कोठे में लिखने की शुरुआत करे और आठों कोठे म इस तरह लिखें।

(१) ॐ ह्राँ अर्हद्भ्यो नमः

(२) ॐ ह्रीँ सिद्धेभ्यो नमः

(३) ॐ ह्रूँ आचार्येभ्यो नमः

(४) ॐ ह्रूँ उपाध्यायेभ्यो नमः

(५) ॐ ह्रैँ सर्व साधुभ्यो नमः

(६) ॐ ह्रैँ सम्यग्दर्शनेभ्यो नमः

(७) ॐ ह्रौँ सम्यग्ज्ञानेभ्यो नमः

(८) ॐ ह्रः सम्यक्चारित्रेभ्यो नमः

इस तरह आठों कोठों में लिखने से तीसरा गोलाकार मडल तैयार हो जाता है। बाद में चौथा गोलाकार मडल सोलह कोठे वाला बनावे और दूसरे व तीसरे कोठे में प्रथम लिखने की शुरुआत की है उसके ठीक ऊपर से चौथे मडल में नम्बर चार इस तरह लिखे।

(१) ॐ ह्रीं भुवनेन्द्रेभ्यो नम॰
(२) ॐ ह्रीं व्यतरेन्द्रेभ्यो नम.
(३) ॐ ह्रीं ज्योतिष्केन्द्रेभ्यो नम
(४) ॐ ह्रीं कल्पेन्द्रेभ्यो नम॰
(५) ॐ ह्रीं श्रुतावधिभ्यो नम.
(६) ॐ ह्रीं देशावधिभ्यो नम
(७) ॐ ह्रीं परमावधिभ्यो नम
(८) ॐ ह्रीं सर्वावधिभ्यो नम.
(९) ॐ ह्रीं बुद्धिऋद्धिप्राप्तेभ्यो नम.
(१०) ॐ ह्रीं सर्वोषधिप्राप्तेभ्यो नम
(११) ॐ ह्रीं अनतबलर्द्धिप्राप्तेभ्यो नम॰
(१२) ॐ ह्रीं तपर्द्धिप्राप्तेभ्यो नमः
(१३) ॐ ह्रीं रसर्द्धिप्राप्तेभ्यो नम
(१४) ॐ ह्रीं वैक्रेयर्द्धिप्राप्तेभ्यो नम

(१५) ॐ ह्रीं क्षेत्रर्द्धिप्राप्तेभ्यो नम

(१६) ॐ ह्रीं अक्षीणमहानसर्द्धिप्राप्तेभ्यो नमः

इस तरह सोलह कोठो में लिखने बाद चौथा मडल तैयार हो गया समझना चाहिए।

बाद में इसी चौथे मडल के पास ही पांचवाँ गोलाकार मडल चौबीस कोठे वाला बनावे जिसमें लिखने की शरुआत अनुक्रम से ऊपर बताये अनुसार ही करे, और नम्बर वार चौबीस ही कोठो में इस तरह लिखे।

(१) ॐ ह्रीं श्रीदेवीभ्यो नमः

(२) ॐ ह्रीं श्री देवीभ्यो नमः

(३) ॐ ह्रीं धृतिभ्यो नमः

(४) ॐ ह्रीं लक्ष्मीभ्यो नमः

(५) ॐ ह्रीं गौरीभ्यो नमः

(६) ॐ ह्रीं चडीभ्यो नमः

(७) ॐ ह्रीं सरस्वत्यै नमः

(८) ॐ ह्रीं जयाभ्यो नमः

(९) ॐ ह्रीं अबिकायै नमः

(१०) ॐ ह्रीं विजयायै नमः

(११) ॐ ह्रीं स्त्रियाभ्यो नम॰

(१२) ॐ ह्रीं अजिताभ्यो नम

(१३) ॐ ह्रीं नित्याभ्यो नम॰

(१४) ॐ ह्रीं मदद्रव्याभ्यो नम

(१५) ॐ ह्रीं कामागाभ्यो नम

(१६) ॐ ह्रीं कामबाणाभ्यो नम

(१७) ॐ ह्रीं सानदाभ्यो नम

(१८) ॐ ह्रीं आनद मालिनीभ्यो नम॰

(१९) ॐ ह्रीं मायाभ्यो नम

(२०) ॐ ह्रीं मायाविनीभ्यो नम॰

(२१) ॐ ह्रीं रौद्रीभ्यो नम

(२२) ॐ ह्रीं कलाभ्यो नम

(२३) ॐ ह्रीं कालीभ्यो नम

(२४) ॐ ह्रीं कलिप्रियाभ्यो नम॰

इस तरह लिखे बाद ऋषिमडल का पाचवाँ गोलाकार मडल तैयार हो गया समझियेगा।

बाद में यत्र के दाहिनी तरफ (ॐ) लिखे और उपर के

भागमे याने सिरे पर तो ह्रीँ लिखे वाई तरफ(श्विँ) और नीचे के भागमे (क्ष) लिखकर यत्रके चारों तरफ गोलाकार लाइन खेंच कर एकसौ आठ ह्रीँ लिखना जो इस तरह लिखना कि उपर जताये हुवे ॐ, ह्रीं, श्विँ, और क्ष' के वीच में सत्ताइस सत्ताइस ह्रीँ आ सके, इस तरह लिख लेने वाद पूरा ऋषि मडल यत्र तैयार हो गया समझियेगा।

इस यत्र के चारों तरफ लकीरें जैसी के यत्र के चित्र मे वताई गई है खींच कर उनके चारों कोनोंमें त्रिशूल का आकार वना कर उसके पास (ल) अक्षर लिखना चाहिए जिससे पृथ्वी मडल की स्थापना हो जाती है, और यत्र को सिद्ध करने के लिये इस स्थापना की आवश्यकता है।

एसी स्थापनाऐं और भी चार पाँच तरह की होती हैं लेकिन सर्व कार्य में यह स्थापना हीश्रेष्ठ मानी गई है अतः इसी तरह स्थापना कर लेवे।

---

(११) ॐ ह्रीं रुन्द्राभ्यो नमः
(१२) ॐ ह्रीं अजिताभ्यो नमः
(१३) ॐ ह्रीं नित्याभ्यो नमः
(१४) ॐ ह्रीं मदद्रव्याभ्यो नमः
(१५) ॐ ह्रीं कामागाभ्यो नमः
(१६) ॐ ह्रीं कामबाणाभ्यो नमः
(१७) ॐ ह्रीं सानंदाभ्यो नमः
(१८) ॐ ह्रीं आनंद मालिनीभ्यो नमः
(१९) ॐ ह्रीं मायाभ्यो नमः
(२०) ॐ ह्रीं मायाविनीभ्यो नमः
(२१) ॐ ह्रीं रौद्रीभ्यो नमः
(२२) ॐ ह्रीं कलाभ्यो नमः
(२३) ॐ ह्रीं कालीभ्यो नमः
(२४) ॐ ह्रीं कलिप्रियाभ्यो नमः

इस तरह लिखे बाद ऋषिमंडल का पाचवाँ गोलाकार मंडल तैयार हो गया समझियेगा।

बाद में यंत्र के दाहिनी तरफ (ॐ) लिखे और उपर के

भागमे याने सिरे पर तो ह्रीँ लिखे आई तरफ(क्ष्विँ) और नीचे के भागमे (क्ष) लिखकर यत्रके चारों तरफ गोलाकार लाइन खेंच कर एकसौ आठ ह्रीँ लिखना जो इस तरह लिखना कि उपर बताये हुवे ॐ, ह्रीँ, क्ष्विँ, और क्षः के बीच में सत्ताइस सत्ताइस ह्रीँ आ सके, इस तरह लिख लेने बाद पूरा ऋषि मडल यत्र तैयार हो गया समझियेगा।

इस यत्र के चारों तरफ लकीरें जैसी के यत्र के चित्र मे बताई गई है खींच कर उनके चारों कोनोमें त्रिशूल का आकार बना कर उसके पास (ल) अक्षर लिखना चाहिए जिससे पृथ्वी मडल की स्थापना हो जाती है, और यत्र को सिद्ध करने के लिये इस स्थापना की आवश्यकता है।

एसी स्थापनाऐं और भी चार पाँच तरह की होती है लेकिन सर्व कार्य में यह स्थापना हीश्रेष्ठ मानी गई है अतः स्थापना कर लेवे।

ऋषि मंडल यंत्रमें पदस्थ ध्येय स्वरूप



ऋषिमंडल यंत्रमें अक्षरों की योजना और स्वर व्यंजन के साथ संयुक्ताक्षर के मंत्र बीजाक्षरका मिश्रण देख आश्चर्य करने की आवश्यकता नहीं है। प्राचीन ग्रन्थोंमें जो बात प्रतिपादित होती है वह बिना कारण के नहीं होती, साधारण बुद्धिवाला मनुष्य ज्यादे अनुभवी न होने से उसे ऐसा खयाल हो जाता है कि, स्वर व्यंजन के अक्षरों की क्या पूजा बताई? लेकिन इसके प्राचीन प्रमाण बहुत से सम्पादन होते है, उनमें से एक उदाहरण योगशास्त्रका जिसमें श्रीमान् हेमचंद्राचार्यजी महाराजने पदस्थ ध्येयका स्वरुप बताते कथन किया है उसका संक्षेप से पाठकों के समझने के हेतु यहां उल्लेख करेंगे।

योगशास्त्र में बयान है कि पवित्र पदों का आलम्बन लेकर ध्यान किया जाता है उसीको शास्त्रवेत्ताओंने पदस्थ ध्यान कहा है, जिसका स्वरूप बताया है कि नाभिकमल के ऊपर सोलह पत्ते वाले कमल के पुष्प का चिंतवन करे, और पत्ते पर भ्रमण करती हुई ॐ पंक्तिका चिंतवन करना

अर्थात्, अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ, ऋ, ॠ, ऌ, ॡ, ओ, औ, अं, अः इस तरह चिंतवन करना बादमे—

हृदयमें स्थापित कमल का पुष्प जिसके चौवीस पत्ते बनाना जिस की कर्णिका सहित पुष्पमें पचीस वर्णाक्षर अनुक्रम से स्थापित करना जैसे, क, ख, ग, घ, ङ, च, छ, ज, झ, ञ, ट, ठ, ड, ढ, ण, त, थ, द, ध, न, प, फ, ब, भ, म तक चिंतवन करना उसके बाद मुखकमलमें आठ पत्तेवाले कमल के अंदर बाकी रहे हुये आठ वर्णाक्षर अर्थात्, य, र, ल, व, श, ष, स, ह का चिंतवन करना, इस तरह का चिंतवन करने वाले श्रुत पारगामी हो जाते हैं, ध्यान करने का अनुभव जिन्होंने प्राप्त किया हो उन महापुरुषों से एसे ध्यान का स्वरुप समझ कर अभ्यास बढाया जाय तो अवश्य लाभदाई होगा, और जो महापुरुष इस का ज्ञान प्राप्त कर के अनादि सिद्धि वर्णात्मक ध्यान यथाविधि करते रहते हैं उनको अल्प समयमें ही, गया, आया, होनेवाला, जीवन मरण शुभ, अशुभ आदि जानने का ज्ञान उत्पन्न हो जाता है।

दूसरा ध्यान यूं बताया है कि नाभिकमल के नीचे आठ वर्ग के आद्याक्षर जैसे अ, क, च, ट, त, प, य, श आठ पत्तों सहित स्वर की पंक्ति युक्त केसरासहित मनोहर आठ पाखडी-वाला कमल चिंतवन करे। तमाम पत्तों की संधिया सिद्ध पुरुषों की स्तुति से शोभित करना, और तमाम पत्तों के अग्र

भाग में प्रणवाक्षर व माया बीज अर्थात् (ॐ) (ह्रीँ) से पवित्र बनाना। उन कमल के मध्य में रेफ से (ं) आक्रान्त कला बिन्दु (ँ) से रम्य स्फटिक जैसा निर्मल आद्यवर्ण (अ) सहित, अन्त्य वर्णाक्षर (ह) स्थापन करना जिस से (अर्हं) बनेगा यह पद प्राणमान्त के स्पर्श करनेवाले को पवित्र करता हुवा, ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत, सूक्ष्म, और अति सूक्ष्म जैसा उच्चारण होगा। जिसके बाद नाभिकी, कण्ठकी, और हृदयकी, घन्टिकादि ग्रन्थियों को अति सूक्ष्म ध्वनि से विदारण करते हुवे, मध्य मार्ग से वहन करता हुवा चिन्तवन करना, और बिन्दुमें से तप्तकलाद्वारा निकलते दूध जैसे श्वेत अमृत के कल्लोलों से अतर आत्मा को भीगोता हुवा चिंतवन कर अमृत सरोवर में उत्पन्न होनेवाले सोलह पाखडी के सोलह स्वरवाले कमल के मध्यमें आत्मा को स्थापन कर उसमें सोलह विद्यादेवियों की स्थापना करना।

देदिप्यमान स्फटिक के कुम्भमें से झरते हुवे दुध जैसा श्वेत अमृत से जिसको बहुत लम्बे समय से सिंचन हो रहा हो एसा चिंतवन करे।

इस मंत्राधिराज के अभिधेय शुद्ध स्फटिक जैसे निर्मल परमेष्टि अर्हन्तका मस्तक में ध्यान करना, और एसे ध्यान आवेश में "सोऽहं सोऽहं" बारम्बार बोलने से निश्चयरूप से आत्मा की परमात्मा के साथ तन्मयता

इस तरहकी तन्मयता होजाने बाद जरागी, अद्वेषी, अमोही, सर्वदर्शी, और देवगग आदि से पूजनीय एसे सच्चिदानन्द परमात्मा समवसरण मे धर्मोपदेश करते हों एसी अवस्थाका चितवन करना चाहिये, जिससे ध्यानी पुरुप कर्मरहित होकर परमात्मपद पाता है।

महापुरुप, ध्यानी योगीजो इस विषय का विशेप अभ्यास करना चाहते हों वह मत्राधिप के उपर व नीचे रेफ सहित कला और विन्दु से दबाया हुवा–अनाहत सहित सुवर्ण कमल के मध्यमें विराजित गाढ चद्र किरणों जैसा निर्मल आकाश से सञ्चरता हुवा दिशाओं को व्याप्त करता हो इस प्रकार चितवन करना, और मुखकमल में प्रवेश करता हुवा भ्रकुटी में भ्रमण करता हुवा, नेत्रपत्रों में स्फुरायमान भाल मडल में स्थिररूप निवास करता हुवा तालू के छिद्रमें से अमृत रस झरता हो, चन्द्र के साथ स्पर्धा करता हो, ज्योतिप मडल में स्फुरायमान आकाश मडल में सञ्चार करता हुवा मोक्ष लक्ष्मी के साथ में सम्मलित सर्व अवयवादि से पूर्ण मत्राधिराज को कुम्भक से चितवन करे। जिसका विशेप स्पष्टीकरण करते हुवे कहा है कि "अ" जिसकी आदमें है और "ह" जिसके अन्तमें है व विन्दुसहित रेफ जिसके मध्यमें लगा हैं एसा पद "अर्हं" परम तत्त्व है, और इसको जो जानते हैं वही तत्त्वज्ञ हैं–तत्त्वज्ञानी हैं।

ध्यानी योगी महापुरुष इस महातत्त्व-मंत्र का स्थिर चित्त से ध्यान करे तो फलस्वरूप आनन्द और सम्पत्ति की भूमिरूप मोक्षलक्ष्मी को प्राप्त कर लेता है।

रफ बिन्दु और कला रहित शुभाक्षर "ह" का ध्यान करते हैं, उन पुरुषों को ध्यान करते करते यही अक्षर अनक्षरता को प्राप्त हो जाता है, और फिर बोलने में नहीं आता सिर्फ लय लग जाती है और इसका स्वरूप व्याप्त हो जाता हो इस प्रकार से चिंतवन करे, और अभ्यास बढाता हुवा चन्द्रमा की कला जैसा सूक्ष्म आकारवाला, व सूर्य की तरह प्रकाशमान, अनाहत नाम के देवको स्फुरायमान होता हो इस तरह का ध्यान लगावे।

बाद में अनुक्रम से केश के अग्रभाग जैसा सूक्ष्म चिन्तवन करना और क्षणवार जगतको अव्यक्त ज्योतिवाला चिन्तवन कर के लक्ष से चित्त को हटाया जाय तो अलक्ष में चित्त को स्थिर करते हुवे अनुक्रम से अक्षय इन्द्रियों से अगोचर जैसी अनुपम ज्योति प्रगट होती है। इस प्रकार लक्ष के आलम्बन से अलक्ष भाव प्रकाशित हुवा हो तो ध्यान करने वाले को सिद्धि प्राप्त हो गई समझना चाहिये।

उपरोक्त कथनानुसार स्वर व्यंजन अक्षरों की उपयोगिता पाठकों के समक्ष में आ गई होगी जिस में भी आद्य व अंताक्षरका महात्म्य तो एक अजीब प्रकारका बताया है और

अनाक्षर " ह्र " की महिमा का भी संक्षेप से वर्णन आ गया है जो मायाबीज है और ऋषिमंडल-यन्त्र में मुख्यतया इसी का ध्यान इसी में स्थापना आदि आती है, यह मायाबीज बहुत शक्तिदाता व सिद्धियों का भंडार है।

इस तरह अक्षरों की उपयोगिता बताई गई, और मंत्राक्षर-संयुताक्षर का बयान पहले आ चुका है, देवदेवियों के नाम बाबत पाठक खुद समझ सकते हैं। इस तरह इस यन्त्र को व ध्यान की विधि को समझ कर उपयोग सहित सविधि आराधन किया जायगा तो परमपद को प्राप्त कराने-वाला यह मंत्र है।



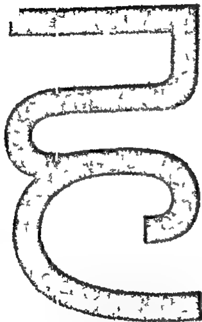
॥ मायाबीज ॥

मन्त्र शास्त्र में ॐ को प्रणव अक्षर और ह्रीँ को मायाबीज बताया है। बीज उसीका नाम है कि जिसमें वृक्ष पैदा करने की शक्ति हो, गेहूंका बीज गेहूं पैदा करता है, और चावल के बीज से चावल पैदा होते हैं तदनुसार ह्रीँ को शास्त्रकारोंने बीजाक्षर बताया है, और फिर साथ ही माया नाम दिया गया इस लिये इसका स्पष्टीकरण करना आवश्यकिय है। माया अर्थात् लीला या प्रताप कुछ भी कह दीजिये जिस में पैदा करने की शक्ति है उसका नाम बीज है और फैलाने का नाम माया है।

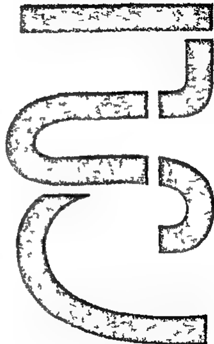
ह्रीँ में भी एसी अनुपम शक्ति का समावेश होना चाहिये कि जिसमे स्वर व्यञ्जन के अक्षरों को उत्पन्न करने की शक्ति हो, और ठीक भी है क्योंकि मायाबीजका मतलब तो तब ही सिद्ध हो सकता है कि उपरोक्त कथनानुसार सिद्ध हो सके।

मायाबीज सिद्ध करने के लिये ह्रीँ का चित्र पाठकों के सामने है, इसको ध्यान देकर देख लेवें और बाद में रेखा चित्र जिसमें ह्रीँ के पाच विभाग बताये गये हैं उनको भी खूब ध्यान देकर देख लें, और आप भी इस तरह से ह्रीँ के

बीजाक्षर मायाबीज



बीजाक्षर ह
पृष्ठ ५०



उपर बताये हुवे पांच विभागोसे स्वर व्यंजन बनते हैं।

पांच विभाग मोटे बोर्ड कागज के बना लेवें और फिर निज की बुद्धिमता से इन पांचों विभागों से स्वर व्यंजन के अक्षर बनाईयेगा। प्रयत्न करने से जब इस तरह से आप स्वर व्यंजन के अक्षरों को पांचों विभागों में समावेश करना सिद्ध करलेंगे तो आपको ह्रीं मायाबीज है इस तरह मानने में कोई संदेह नहीं रहेगा। जब ऐसा सिद्ध हो जाता है तो इस अक्षर में ज्ञान के प्रकाश का कितना समावेश है इस को पाठक खुद सोच लें और समझ लें कि शास्त्रों में मायाबीज हेतुपूर्वक ही बताया गया है जो बहुत शक्तिशाली व मोक्ष प्राप्त कराने वाला है।

इरादा तो यह था कि स्वर व्यंजन अक्षरों को ह्रीं के अमुक भाग से बनाना इस पुस्तक में ही चित्र सहित दे दिया जाय, किन्तु एक तो मैं खुद ही इस में निष्णांत नहीं हूं, और दूसरे चित्रकार भी ऐसा नहीं मिला कि वह ऐसे चित्र जल्दी बना कर दे देवे। इस लिये पाठकों को इसका परिचय कराने के लिये रेखा चित्र दे दिया है सो देख कर समझ लेना चाहिए।

वैसे तो ह्रीं की महिमा का पार नहीं है लेकिन बीज-रूप सिद्ध करने के लिये जो चित्र आप देख रहे हैं वह एक प्राचीनता का नया प्रमाण आप के सामने है जिसको ध्यान से देखियेगा।



सकलीकरण

सकलीकरण अर्थात् अग प्रतिष्ठा मत्र का जाप करने से पहले करने की होती है जिसका विवरण इस प्रकार है।

आत्मशुद्धि मत्र

॥ ॐ ह्रीं नमो अरिहताण ॥

॥ ॐ ह्रीं नमो सिद्धाण ॥

॥ ॐ ह्रीं नमो आयरियाण ॥

॥ ॐ ह्रीं नमो उवज्झायाण ॥

॥ ॐ ह्रीं नमो लोए सव्व साहूण ॥

इस आत्मशुद्धि मत्र का एकसौ आठ जाप कर लेना चाहिए। यह महा मगलिक आत्मतत्त्व को बढाने वाला मत्र है।

प्राण प्रतिष्ठा मत्र

॥ ॐ ह्रीं वज्राऽधिपतये आँ ह्रीं ऐं ह्रीं श्रृं हैं क्षः ॥

प्राण प्रतिष्ठा के हेतु इस मत्र का इकीस जाप कर लेना चाहिए, और बाद में इसी मत्र द्वारा निज की चोटी (शिखा) अनेक (उत्तरासङ्ग) ककण कुंडल अगुठी व पूजा पाठ में

पहिनने के वस्त्र आदि को मन्त्रित कर के तमाम सामग्री को शुद्ध बना लेना चाहिए।

कवच निर्मल मंत्र

ॐ ह्रीँ श्रीँ वद वद वाग्वा दिन्यै नमः स्वाहा ॥

इस मन्त्र के जाप से कवच याने यन्त्र अथवा यन्त्र वाला मादलिया यदि पास में रखने को कराया हो तो इस मन्त्र द्वारा शुद्ध कर लेना चाहिए।

हस्त निर्मल मन्त्र

ॐ नमो अरिहन्ताणं श्रुतदेवि प्रशस्त हस्ते हूँ फट् स्वाहा

इस मन्त्र का जाप करते समय हाथों को धूप के धुँवे पर रख कर निर्मल कर लेवे।

काय शुद्धि मन्त्र

॥ ॐ णमो ॐ ह्रीँ सर्वपापक्षयकरि ज्वालासहस्रप्रज्वलिते मत्पाप जहि जहि दह दह क्षाँ क्षीँ क्षूँ क्षीँ क्षः क्षीरधवले अमृतसम्भवे बधान बधान हूँ फट् स्वाहा ॥

इस मन्त्र द्वारा शरीर को पवित्र बनाना चाहिए और साथ ही अन्तःकरण को भी निर्मल रखने का प्रयत्न करना [illegible] से तत्काल सिद्धि होगी।

हृदय शुद्धि मन्त्र

॥ ॐ ऋषभेण पवित्रेण पवित्रीकृत्य आत्मान पुनीमहे स्वाहा ॥

इस मंत्र का जाप करते समय दाहिने हाथ को हृदय पर रख कर अन्तःकरण को शुद्ध बनाने की भावना रखना चाहिए। ईर्ष्या, द्वेष, कुटिलत्व, क्रोध, मान, माया, और लोभ का त्याग करना झूठ नहीं बोलना और ऐसे कामों से दूर रहना चाहिए।

मुख पवित्र करण मन्त्र

॥ ॐ नमो भगवते श्रीं ह्रीं चन्द्रप्रभाय चन्द्रमहिताय चन्द्र मूर्तये सर्वसुखप्रदायिने स्वाहा ॥

इस मंत्र द्वारा निजके मुख कमल को पवित्र बनाना चाहिए, और गम्भीरता, सरलता, नम्रता आदि का भाव रखना चाहिए।

चक्षु पवित्र करण मन्त्र

॥ ॐ ह्रीं श्रीं सुराग्रे कपिलशिखे हूँ फट् स्वाहा. ॥

इस मंत्र द्वारा निज के नेत्रों को पवित्र करना और नेत्रों में स्नेहभाव सरलता का प्रकाश हो ऐसे भाव बनाकर नेत्र पवित्र करना चाहिये।

मस्तक शुद्धि मंत्र

॥ ॐ नमो भगवती ज्ञानमूर्तिः सप्तशतक्षुल्लकादि महाविद्याधिपतिः विश्वरूपिणी ह्रीं ह्रूँ क्षौं क्षां ऊँ शिरस्त्राणपवित्रीकरण ॐ णमो अरिहन्ताण हृदय रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा ॥
इस मन्त्रद्वारा मस्तक निर्मल करना और शुद्ध हृदयसे यथासाध्य जाप करते जाना जिससे मन्त्र तत्काल सिद्ध होता है।

॥ मस्तक रक्षा मंत्र ॥

ॐ णमो सिद्धाण हर हर त्रिसिरा रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा ॥

इस मन्त्रद्वारा मस्तक रक्षाकी भावना रख बोलते समय मस्तक पर हाथ लगाना चाहिए।

॥ शिखा बन्धन मंत्र ॥

ॐ णमो आयरियाण शिखा रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा।
इस मन्त्रद्वारा शिखाको पवित्र करके, चोटीके केशों (बाल) को बाधना चाहिए, बाधते समय बालोंमें गाठ नही लगाना और यूही लपेटकर स्थिर करदेना चाहिए।

॥ मुखरक्षा मन्त्र ॥

॥ ॐ णमो उवज्झायाणं एहि एहि भगवति वज्रकवच वज्रिणि रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा ॥

॥ नमो लोए सव्वसाहूण मौर्वी ॥
॥ एसो पञ्चनमुक्कारो–पादतले,
वज्रशिला सव्वपावप्पणासणो ।
वज्रमयप्राकार चतुर्दिशु मङ्गलाण च,
सव्वेसिं खादिराङ्गारखातिका ॥
॥ पढम हवई मङ्गल्य परि वमोवज्रमय विधान ॥
ऊपर बताया हुआ मंत्र बोलनेसे भी सक्ली करण हो जाता है अतः जिसको जैसा सुगम मालुम हो तदनुसार करे।

॥ सकलीकरण तीसरा ॥

एक और सकलीकरण बताया है, जो सर्व प्रकारकी ऋद्धि सिद्धि देने वाला है, और मंत्रके आद्यमें इस सक्ली करण द्वारा भी शुद्धि कर सकते हैं, जैसी जिसको सुविधा व सुगमता मालुम हो उसीको अङ्गीकार करे, मंत्र इस प्रकार है ॥

ॐ णमो अरिहन्ताणं ॐ हृदय रक्ष रक्ष हैं फट् स्वाहा ॥
॥ ॐ णमो सिद्धाणं ह्रीं शिरो रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा ॥
॥ ॐ णमो आयरियाणं हूं शिखा रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा ॥
॥ ॐ णमो उवज्झायाणं हूं एहि एहि भगवति वज्रकवचे वज्रपाणि रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा ॥

॥ ॐ नमो ऽर्हत् [illegible] ॥ [illegible]
[illegible] इस [illegible] है [illegible]

॥ एसो पंच नमुक्कारो [illegible] ॥ [illegible]
पपणासणो मंगलाणं च [illegible] [illegible]
मयो स्वाहा ॥

॥ परम [illegible] [illegible] ॥

इस तरह तीसरा [illegible] बनाया है [illegible]
पुरुषको [illegible] तरह [illegible] देना चाहिए।



ऋषि मंडल आलम्बन



हर एक मत्रको सिद्ध करनेके लिये यह नियम है कि जिस मत्रका जो अधिष्ठाता हो उनहीका चित्र अथवा प्रतिमा आलम्बन रूप सामने रखना चाहिए। बहुधा एसा देखा जाता है कि इस विषयका ध्यान साधक वर्ग कम रखते है, और जहा सिद्धचक्र को आलम्बन रूप रखना चाहिए वहा यक्षको या माणिभद्रजी पद्मावती आदिको आलम्बन में रखते है. देवकी जगह देवी और यक्षकी जगह देव आदि विपरीत आलम्बन रखनेसे मत्र सिद्ध नहि होता। ऋषि मडलके पति–अधिष्ठायक चौबीस जिनेश्वर भगवान हैं जिनकी स्थापना ह्रीँ में बताई गई है और परिकरमें देव देवियों की स्थापना जो रक्षाके हेतु व कार्य सिद्ध करनेके निमित्त की गई है, इस लिये सबसे अच्छा आलम्बन तो ऋषिमडल यत्र ही है और सिद्धचक्रजी का आलम्बन भी इस मत्रके जाप में उपयोगी बताया गया है।

ऋषिमडल यत्र सोनेके चादीके तांबेके कासीके अथवा सर्व धातुके पतडे पर बना हुवा मिल जाय तो सबसे अच्छा है, और एसा न मिल सके तो ऋषिमडल यत्र जो इस पुस्तकके साथ दिया जा रहा है उसी को आलम्बन में रख लेवे क्यों कि इस मत्रके जाप में जितनी तरहकी स्थापना चाहिए सारी इसमत्रमें मौजूद है।

स्थापना करते समय ध्यान रखना चाहिए कि स्थापना निजकी नाभि से उंची रहे और उसके लिये एक बाजोट जिसे सिंहासन-पाटीया-या पाटला भी कहते है जो बहुत सुन्दर बना हुवा हो और नाभिके प्रमाण तक उंचा हो एसे बाजोटको शुद्ध करके उसके उपर पीले रंगका कपडा बिछा लेवें और उस पर ऋषिमंडल यत्रको स्थापना करे।

यत्रके दाहिनी तरफ घी का दीपक जलता रहे और बाई तरफ धूप या अगरबत्ती जलती रहे-दीपक की ज्योत ठीक प्रकाश देने वाली होना चाहिये क्यों कि इससे मत्रशक्ति का विकास होता है।

यत्र यदि सोने चादी ताम्बा कासी आदिका बना हुवा हो तो नित्य प्रति पक्षाल पूजा अष्ट-द्रव्यसे करना चाहिए, और यत्र कपडे पर हो या कागज पर छपा हुवा या लिखा हुवा हो तो वासक्षेपसे नित्य पूजा करना और सामने चावल नैवेद्य फल आदि चढाना चाहिए।

दीपक जलता हुवा इतना उंचा रहे कि जिसकी ज्योति ऋषि मडल यत्र में जो ह्रीं है उस के मध्य भाग तक आ जावे अर्थात दीपक को ठीक उंचाई पर रखे और जो जो विधान करने के है वह करते जाय जिसका पूरा विवरण आगे के प्रकरणमे आवेगा।

ऋषिमंडल ध्यान विधि



यह तो प्रसिद्ध बात है कि मन्त्र साधनाकी सिद्धि के लिये ध्यानभी एक मुख्य अंग है, और साधक पुरुष ध्यान क्रियामें निपुण हो तो सिद्धि प्राप्त करता सहज जाता है। ध्यान करने वाले को एकाग्रताके लिये अथवा जिनका ध्यान किया जाता है उनके उपर एकनिष्ठ होनेके हेतु नेत्र कमल बंध कर ध्यान मग्न होना चाहिए। मनको साफ रखे ममता मायाका त्याग करे और समभाव आलम्बित होकर विषयादि कुविकल्पोंसे विराम पाकर सम परिणामी बना रहे तो लाभका हेतु है। जिन पुरुषोंको समभाव गुण प्राप्त नही हुवा है उन पुरुषोंको ध्यान करने समय अनेक प्रकारकी विडम्बनायें उपस्थित हो जाती हैं, और साध्य बिन्दु सिद्ध होनेमे विलम्ब हो जाता है, इस लिये ध्यानके कार्यमे प्रवेश करते समय सम परिणामी होनेका अभ्यास करना चाहिए, क्योंकि सम परिणाम आये विना वास्तविक ध्यान नही हो पाता और विना ध्यानके निष्कम्प समता नही आ सकती इस तरह अन्योन्य कारण हैं।

साधक पुरुषको चाहिए कि समता गुणमें झूलता हुवा ध्यानका अभ्यास करे। ध्यान करते समय स्थान, शरीर,

वस्त्र, और उपकरण शुद्धिकी तरफ विशेष ध्यान रखना चाहिए, क्योंकि पवित्रतासे चित्त प्रसन्न रहता है, और साधना सिद्ध होती है। जो पुरुष हृदयको पवित्र किये बिना ध्यान करते हैं उनको सिद्धि प्राप्त नही होती। एक मामूली बात है कि राजा महाराजाको अपने गृह निवासमें आमंत्रित करते हैं तो निवास स्थानको किस तरहका पवित्र व सुन्दर-स्वच्छ बनाकर सजाया जाता है और शोभा बढाने में लक्ष दिया जाता है जिसका वृत्तान्त पाठक जानते होंगे। सोचने जैसी बात है कि राजा महाराजाकी पधरामणीमें इतने दरजे लक्ष देते हैं तो त्रिलोकीनाथको हृदयमें प्रवेश करते समय हृदय-अन्तःकरण कितना निर्मल बनाना चाहिए जिसकी कल्पना पाठक स्वय कर सकते हैं।

जाप करनेके तरीके तीन प्रकारके बताये गये हैं जिसका वर्णन "निर्वाण कलिका" नामके ग्रन्थमें श्रीमान् पादलिप्ताचार्यजी महाराजने किया है, और बताया है कि पहला जाप मानस, दूसरा जाप उपांशु और तीसरा जाप भाष्य है, इन तीन प्रकारके जापका खुलासा इस प्रकार है।

(१) मानस जाप उसको कहते हैं कि मनही में समता पूर्वक स्थिर चित्तसे एकाग्रता सहित लय लगाता हुआ ध्यान करता रहे। इस जापको मंत्र साधना का प्राण-रूप माना गया है, इस लिये उच्चार रहित नेत्रोंको [illegible] ही में

जाप किया करे तो अपूर्व आनन्दका अनुभव होता है, और जापकी दूसरी विधियोंसे हजार गुणा मानस जाप श्रेष्ट माना गया है। जिसके प्रतापसे वासना क्षय होती है और शान्ति तुष्टि पुष्टि व मोक्ष पद पाते है।

(२) दूसरा उपाशु जाप उसे कहते है कि दूसरा कोई पुरुष पासमें बैठा हो वह तो सुने नही लेकिन अन्तर जल्प रूप कण्ठ द्वारा या मुँह मेंही जाप करता रहे। अर्थात् होठ हिलते नजर आवें लेकिन जाप मुँह मेंही होता रहे, और पासम बैठे हुए पुरुष उच्चार को न समझ सकें। एसे जाप भी सिद्धि दाता होते है, और मन वश में रहता है, ससार वासनासे मूर्च्छा आती है। तप तेज बढता है, और नेत्रोंको कुछ खुले हुवे कुछ बध सामने के आलम्बन पर स्थिरता पूर्वक रखनेसे एसा जोश आता है कि जिसके प्रभावसे किसी तरहका घेन–नशा आया हो और मस्त होकर बैठे हों एसा अनुभव होता है, इस तरह होते होते स्थूलसे सूक्ष्म-में प्रवेश हो जाता है, और स्थिरता आ जाती है अत इस जापका अभ्यास करना चाहिए।

तीसरा भाष्य जाप बताया गया है, जिसका बयान करते कहा कि जाप करने समय पासमें जो पुरुष हों वहभी स्पष्ट सुन सके और लय लगाता हुवा शुद्धता पूर्वक जाप करता रहे तो एसे जापसे वाक्शुद्धि होती है और आकर्पण

शक्ति बढती है। इस तरह जो पुरुष जाप करते हैं उनका मन भी स्थिर रहता है, और बोलते बोलते मन्त्रमें तद्रूप हो जाते हैं, (मन्त्रका आलाप-छन्द-राग सहित करना चाहिए) इस तरहके ध्यान करनेसे जिस पुरुषको वाक्शुद्धि होजाती है, उस पुरुषकी आज्ञा बहुतसे मनुष्य मानते हैं, शक्तिशाली हो जाता है और बहुत करके उस पुरुषका वचन कभी खाली नही जाता।

ऋषिमंडल मंत्रभेद



मत्रके भेद भी कइ तरहके बताये हैं, इसी लिए एक ही मत्र, शान्ति, तुष्टि, पुष्टि, क्रूर, मारण, उच्चाटन, और वशीकरण का काम देता है। मत्र वेत्ताओंने एसी विधिका अयत्र बयान कर मत्र जनता के सामने रख दिये हैं। एसे मत्रोका ध्यान स्मरण किया जाता है तथापि सिद्धि प्राप्त नही होती, और सिद्धि न होनेसे मन हट जाता है, और मन हटना स्वभाविक बात है, क्यों कि साधक पुरुष कष्ट के समयमें परिश्रम, सताप, तप आदि सहन कर आराधना करते हैं, और एसे विपत्ति व कष्ट के समयमें मत्राराधन फलीभुत न हो तो श्रद्धा हट जाना स्वभाविक बात है। मनुष्य को इतनी धैर्यता कहा होती है कि वह सिद्धि प्राप्त न होने पर भी धैर्यता से बैठ रहे, और स्मरण ध्यान करता जाय। इस विषयमें हमें तो यही प्रतीत होता है कि मत्रभेद की जानकारी जैसी कि चाहिए नही होती और आराधना शुरु कर देते हैं इस लिये मत्र सिद्धि नही होती अत पहले मत्रभेद को जान लेना चाहिए। जब मत्रभेद समझमें आ जाय तो साधनका मार्ग बहुत सरल व सुगम हो जाता है।

पल्लव लगाया जाय तो मत्रकी शक्ति तेज हो जाती है, और शांति सूचक मत्र भी तेज स्वभाव वाला बन जाता है जिससे कार्य की सिद्धि भी तत्काल होती है। नम• या कोई भी पल्लव लगा देने बाद स्वाहा लगाया जाता है सो सिद्धि-दायक है, और हर एक पल्लव की प्रकृतिका प्रकाश करने-वाला है, और मत्रकी शक्तिमें वेग पहुचाकर उसे तेजोमय बना देता है, अत आराधन करने वालोंको इस विषयका पूरा ध्यान रखना चाहिए और जैसा कार्य हो वैसा ही पल्लव लगा कर जाप करे जिससे तत्काल सिद्धि होगा।

मत्राक्षर बोलते समय मत्राक्षरके स्वरूप को नही बिगाडना चाहिए। जैसा अक्षर हो ह्रस्व, दीर्घ सयुताक्षर आदि का ध्यान रखकर उसके रूपमें स्पष्ट बोलना चाहिए। इस तरहसे बोलने से मत्रशक्ति बढती है और सिद्धि भी प्राप्त होती है। अत सयुताक्षर बोलते बोलते अपभ्रश न हो जाय जिसका पूरा ध्यान रखना चाहिए।



ऋषिमंडल आम्ना



ऋषिमडलमें खास बात आम्ना की है, और इसकी प्राप्तिके लिए प्रयत्न भी किया जाता है। तथापि कितनेक महानुभाव जो आम्ना जानने वाले है वह जानते हुवे भी बताते नही हैं, और कितनेही यू कह देते हैं कि ऋषिमडल स्तोत्रमें ब्यान आता है कि हरएक को यह मत्र न बताया जाय। बात भी ठीक है जिस समय गणधरमहाराजने इसकी सङ्कलनाकी उस समय पुन्यवान जीव मौजूद थे, और समय भी सुलभ था, जनता भी सरलपरिणामीथी, इसी लिये सिद्धि भी हो जाती थी। जहा तत्काल सिद्धि थी उस समय किसी दुष्परिणामी जीवके हाथ यह मत्रआ जायऔर प्राप्त सिद्धिसे अनिष्ट परिणाम न आ जाय इस हेतुसे आम्ना बतानेकी आज्ञा नही दी गई हो, और साथही भय बताया गया के मिथ्यात्वी को देने से पद पद पर हिंसा के समान पाप लगता है, लेकिन इस पञ्चमकालमें तो भारी कर्मी जीव हैं। न तो पूर्वजों जैसी श्रद्धा है, न इष्ट प्रीति है, और न सामान, सामाग्री, काल, स्वभाव है, अत तत्काल सिद्धि प्राप्त होना बहुत कठिन बात है। तत्काल तो क्या लेकिन बहुत लम्बे समय बाद भी सिद्धि प्राप्त हो जाय तो गनीमत है। हा,

हलुकर्मी श्रद्धावंत जीवों की संसारमें कमी नही है, और एसे उत्तम जीव पुन्यानुबंधी पुन्य वालोंको सिद्धि प्राप्त होना संभवित है, तथापि ऋषिमंडल के सत्तावनमें श्लोक को बताकर इस स्तोत्रकी आम्ना नही बताना यह तो इस कालमें अनिच्छनिय है। जबके स्तोत्रयंत्र बहुत से प्रकाशित हो चुके हैं तो फिर आम्ना को गुप्त रखना बेसूद है। अतः जो आम्ना प्राप्त हुई है उसे पाठकों के सामने रखते हैं, और साथमें यह दावा भी नही करते कि इसके सिवाय और आम्ना है ही नही-होगा हमे इसमें हठवाद नही है, ज्ञानियोंका ज्ञान अनंत है। लेकिन जिस प्रकारका संग्रह कर पाये हैं उसीको पाठकों के सामने रखते हैं, पाठक ध्यान पूर्वक समझ लेवे।

(१) प्रथम तो ऋषिमंडल मूलमंत्रमें नौवें श्लोक द्वारा सत्ताइस अक्षर बताये हैं, और उसकेसाथ आद्यमें ॐ लगाकर मंत्र बोला जाय तो अठ्ठाइस अक्षर होते है। लेकिन मंत्रशास्त्रमें ॐ को मंत्रोंका प्राण बताया है, और ॐ अवश्य लगाना चाहिए इसको गिनतीमें लेनेकी आवश्यकता नहीहै।

(२) ऋषिमंडल के मूलमंत्रका आराधन करने वालोंको अंतमें ह्रीँ लगाकर नमः पल्लव लगानेका [illegible] गया है। नमः पल्लव शान्तिदाता है इस प्रकाश करनेके लिये साथ [illegible]

मत्रशक्तिका वेग बढ जाता है, और मत्रसिद्ध करने के लिये इसकी आवश्यकता है।

(३) ऋषिमंडल मूलमत्रके साथ नम पल्लव बताया गया है। लेकिन जब तेज स्वभावी मत्र बनाना हो तो या एसे कार्यके लिये मत्र आराधन किया जाता हो कि जिसको जल्दी पूरा कर सिद्ध करना है तो नमः पल्लव न लगाकर "फट्" पल्लव लगाया जाय और साथ ही "स्वाहा" बोल कर मत्रकी शक्तिको बढा लेना चाहिए।

(५) ऋषिमंडलके छप्पनवें श्लोक के आद्यमें "भूर्भुव" आता है, सो इसे बोलते समय ॐ लगाकर "ॐ भूर्भुव" बोलना चाहिए। इस श्लोक के आद्यमें ॐ लगाने की आदत कर लेना। इस तरह चार बातें पाठकों के सामने हैं जिनका आदर करना और विशेष विधि आगे के प्रकरण में आवेगा लेकिन समान भावसे करने वालों के लिये उपरोक्त विधान अनुकुल आ सकेगा, आगेके प्रकरण में जो विधि बताई जायगी वह कुछ कठिन है अतः जैसा जिसके समझ में आवे द्रव्यक्षेत्रकालभाव देख कर करे।

उत्तर क्रिया करनेका विधान

ऋषिमंडल पूजामंत्र

ऋषिमंडल यंत्र की पूजा करते समय नीचे बताया हुवा मंत्र बोलना चाहिए ।

॥ ॐ ह्रीँ श्रीँ क्लीँ ऐँ नमः ॥

ऋषिमंडल वीशोपचार

इस मंत्र के साधन करते समय विशोपचार–अर्थात् वीस तरहकी क्रिया करना बताया है जिनके नाम इस प्रकार हैं ।

(१) भूमिशुद्धि, (२) अंगन्यास, (३) सकलीकरण,
(४) आत्मरक्षा, (५) हृदयशुद्धि, (४) मंत्रस्नान.
(७) कल्मषदहन, (८) करन्यास, (९) आह्वाहन,
(१०) स्थापना, (११) सन्निधान, (१२) सन्निरोध,
(१३) अवगंठन, (१४) छोटीका, (१५) अमृतिकरण,
(१६) पुजन, (१७) जाप, (१८) क्षोभणक्षामणा
(१९) विसर्जन (२०) प्रार्थना–स्तुति ।

उपरोक्त कथनानुसार वीस अधिकार करना चाहिए जिसका खुलासा इस प्रकार है ॥

॥ (१) भूमिशुद्धि ॥

ॐ भूरसी भूतधात्री सर्वभूतहिते भूमि शुद्धि कुरु कुरु नमः । यावद्दह पूजा करिष्ये तात्र सर्वजनाना विघ्रान विनाश विनाश सिरिभव सिरिभव स्वाहा ।

इस मत्र को बोलकर भूमिशुद्धिके लिये पृथ्वी पर वासक्षेप डालना चाहिए ।

॥ (२) अंगन्यास ॥

॥ ह्राँ हृदय, ह्रीं कण्ठ, ह्रूँ तालु, ह्रै भ्रूमध्य, ह्रूँ ब्रह्मरन्ध्रेशु ॥

उपरोक्त मत्र बोलते समय हृदय, कण्ठ, तालु आदि के हाथ लगाते जाना और क्रमवार बोलना ।

॥ (३) सकलीकरण ॥

॥ क्षि, पीतवर्ण जानुनो, प, स्फटिक वर्णनाभौ, ॐ रक्तवर्ण हृदय, स्वा, नीलवर्ण मुखे, हा' मृगमदवर्णे भाले ॥

उपर बताये अनुसार बोलते जाना और जानु, नाभि, हृदय, मुख, और भाल पर हाथ लगाते जाना बादमें उलटा जाप इस तरह करना ।

॥ हाः मृगमदवर्णभाले, स्वा नीलवर्णमुखे, ॐ रक्तवर्ण हृदये, प स्फटिकवर्णनाभौ, क्षि पीतवर्णजानुनो इस ता।

बोलकर अंग पर हाथ लगाते हुए उतारना और तीन दफे चढाना तीन दफे उतारना इस तरह अनुक्रम से सक्लीकरण पूरा कर लेवे।

॥ (४) आत्मरक्षा ॥

॥ ॐ परमेष्टि नमस्कार मित्यनेन क्रियार्या आत्मरक्षा. ॥
इस मंत्रको आत्मरक्षा के लिये बोलना।

॥ (५) हृदयशुद्धि ॥

॥ ॐ विमलाय विमलचित्ताय स्वीँ स्वीँ स्वाहा ॥
इस मंत्र को बोल्कर प्रवचन मुद्रा द्वारा तीन दफा मंत्र बोल हृदयशुद्धि करना चाहिए।

॥ (६) मंत्र स्नान ॥

॥ ॐ अमलेविमलेसर्वतीर्थजले प, प, पा पा, वा, वा अशुचिशुचिर्भवामि स्वाहा ॥
इस मंत्र द्वारा पंचाङ्गी स्नान तीन दफा निज के हाथों से स्पर्श करता हुवा मंत्र बोल्कर कर लेवे।

॥ (७) कल्पश दहन ॥

ॐ विद्युत् स्फुलिङ्गे महाविद्ये ममसर्वकल्पश दह दह स्वाहा ॥

॥ (८) करन्यास ॥

ॐ नमो अरिहताण अङ्गुष्ठाभ्या नम॰
ॐ नमो सिद्धाणं तर्जिनिभ्या नम॰
ॐ नमो आयरियाण मध्यमाभ्या नमः
ॐ नमो उवज्झायाण अनामिकाभ्या नम॰
ॐ नमो लोए सव्वसाहूण कनिष्ठाभ्या नम
ॐ सम्यक्‌दर्शनज्ञानचारित्रतपेभ्या करतल करपृष्ठाभ्या नम ॥

इस मंत्र द्वारा अनुक्रम से तीन दफा उङ्गलियों पर मत्र धाल्ना चाहिए।

इतना कर लेने बाद एक वक्त ध्यान लगा कर चिंतवन द्वारा गुरुमहाराज, दशदिग्पाल, नवग्रह, क्षेत्रदेवता आदि की स्थापना करने के लिये इस प्रकार चिंतवन करे।

अत पर सर्वमपि कृत्यमेकवार भविष्यति पुन॰ अत्र गुरूणा दशदिग्पाल, नवग्रहगण क्षेत्रदेवता दिना च पूजा क्रमेऽनुक्रमो प्युद्दयास्तत्रथा येन ज्ञानमदियेन निरस्याभ्यतर नम ममात्मा निर्म्मलीचक्रे तस्मैश्रीगुरुवेनम। अनेन कृत्वा श्रीगौतमसुधर्मादि परपरागत वर्तमानइष्ट धर्मदातृ-सुगुरुपर्यंतावत्री मनसिचिंतयेत्, नमस्कृत्वा चशिरसितेपा दुकाभ्या स्थापनकार्या धूपोक्षेपण च कार्यतत् ॥

॥ (९) आह्वाहन ॥

ॐ इन्द्राग्नि दहधर नैऋत्य पाशपाणी वायुतर शशिमुशील फणीन्द्रचन्द्रा आगत्य पयमिहसानुचरा सचिह्ना पूजाविधं ममसदेव पुराभवन्तु ॥

इस मन्त्र द्वारा दशदिग्पालका आह्वाहन करना चाहिए

ॐ आदित्य सोम मगल बुध गुरु शुक्रा शनैश्चरौ राहु केतु मप्रुखा खेटा जिनपतिपुरतोवतिष्ठन्तु स्वाहा ॥

इस मन्त्र द्वारा नवग्रहका आह्वाहन करना चाहिए।

पुनश्च (पुनस्स) भूतवली मन्त्रेण धूपधूपनिय ॐ नमो अरिहताण, ॐ ह्रीं नमो आकाशगामिण, ॐ ह्रीं चारणा: रूद्धीण जेइमेकिन्नर किं पुरिस महोरग जखरख सपिसाय भूयसाईणीमाईणीप्पभइओ जे जिणघरनिवासिणो नियर-निलगियाप्पयि आरणो सन्निहिया असन्निहिया तेईमे विलेवण धूप पुप्फ फलप्पईथयमिच्छवा तुठिकरा भवन्तु पुठिकराभवन्तु सिवंकराभवन्तु सतिकराभवन्तु सव्वच्छ रख कुणतु सव्वच्छा दुरिआणिनासतु स व्वासिवमुवसमतु सव्वमुच्छयणकारिणो भवन्तु स्वाहा ॥

अस्य मन्त्रस्यार्थं हृदि वि चिन्त्य धूपौ क्षेपण कार्य इति, भूतवलीमन्त्रोय तदनुपुजा विधि मारम्भकाले तथा यदा जप होमचारभेत् तदा अन्तरमनस एवमदेत् ॥

बाध कर अगुष्ट को तर्जनी व मध्यमा के बीच में निकाले और बादमें आह्वाहन मन्त्र इस तरह बोलना ।

ॐ आँ क्रौं ह्रीं श्रीं भगवत शांतिनाथाय अत्र स्नात्रपीठे आगच्छत । सवौषट ।

॥ (१०) स्थापना ॥

ॐ आँ क्रौं ह्रीं श्रीं शान्तिनाथ अत्रपीठेतिष्ठः ठः ठः ॥
इस मन्त्रद्वारा स्थापना करना चाहिए ।

॥ (११) सन्निधान ॥

ॐ आँ क्रौं ह्रीं श्रीं भगवत शान्तिनाथ ममसंधिहिता भवतवषट ॥

सन्निधान करते समय मुष्टि बाध कर अगुष्ट को ऊंचा रखना चाहिए ।

॥ (१२) सन्निरोध ॥

ॐ आँ क्रौं ह्रीं श्रीं भगवत शान्तिनाथाय पूजात यावद्-भेवष्टात्स्य ॥

सन्निरोध करते समय मुष्टि बाधकर अगुष्ट को मुष्टि के अन्दर रखना चाहिए ।

॥ (१३) अवगुंठन ॥

ॐ आँ क्रौं ह्रीं श्रीं शान्तिनाथाय परेषा मिथ्यादृष्या भवतु स्वाहा ॥

तर्जनी उङ्गली उंची करके अवगुठन द्वारा मन्त्र बोलना चाहिए ॥

॥ (१४) छोटीका ॥

॥ विघ्न त्रासनार्थे ॥अ आ पूर्वे इ ई दक्षिणे, उ ऊ पश्चिमे, ए ऐ उत्तरे, ओ औ आकाशे, अं अः पाताले अगुष्या [illegible] स्फुच्छाप्य ॥ इति छोटिका

॥ (१५) अमृतिकरण ॥

अमृतिकरण धेनुमुद्रा द्वारा करना चाहिए।

॥ (१६) पूजन ॥

ॐ आँ क्रौं ह्रीं श्रीं भगवतः शान्तिनाथ [illegible]
नमः ॥

इस मन्त्र से [illegible] पूजा [illegible]
में अन्य देवादिकों की पुजा का मन्त्र [illegible]

ॐ आँ क्रौं ह्रीं श्रीं भगवत [illegible]

वज्रपाणी एरावणवाहन सौधर्मे द्रप्रमुखा सब्बकाश्चतुपष्ठिसुरेन्द्रा ह्रीँ प्रमुखाश्चतुर्विंशतिदेव्य पूजामतीच्छतु स्वाहा ॥

ॐ आँ क्रों ह्रीँ श्री शान्तिनाथजिनपदभक्ता सर्वदेविदेवा पूजामतीच्छतु स्वाहा. ॥

इन मत्रोंद्वारा सर्व देव देवकी पूजा वासकपूरादि से अञ्जलीमुद्राद्वारा करना चाहिए। प्रथम जिनभगवान की पूजा करना, बाद में अधिष्टायक देवदेवीयों की पूजा करना और फिर अष्ट प्रकारी पूजा की सामग्री नैवेद्य आदि चढा कर होम-तर्पण करके आरती उतारना, चैत्यवन्दन करना, शान्तिकलश करना और ब्रह्मशान्ति बोलना।

(१७) वें जाप कर ही लिया और अढारहवें खोमण-खामणा अञ्जलीमुद्रा से करना (१९) वें विसर्जन अस्त्रमुद्रा अर्थात् मुष्टिको बधकर तर्जनी व मध्यमा अङ्गुली को बाहर नीकाल साथ ही पृथ्वी की तरफ रखने से अस्त्रमुद्राहोती है जिससे विसर्जन कर (२०) वें प्रार्थना स्तुतिमें

आज्ञाहीन क्रियाहीन, मंत्रहीन च यत्कृत ॥
स वत्सर्वं कृपया देव ! क्षमस्व परमेश्वर ॥१॥

उपरका श्लोक बोल कर समाप्त करना।



न्यास, उवज्झायाण हैं नाभिं, नमो लोए सव्वसाहूण ह्रौं पादौ, ॐ ह्रीं नमो ज्ञानदर्शन चारित्रान ह्र सर्वांग रक्ष रक्ष स्वाहा

करन्यास

ॐ ह्रीं अर्हं अंगुष्ठाभ्या नम, ॐ ह्रीं अर्हंसिद्धा तर्जनिभ्या नम, ॐ ह्रीं अर्हं आचार्या मध्यमाभ्या नम ॐ ह्रीं अर्हं उपाध्याया अनामिकाभ्या नम ॐ ह्रीं अर्हं सर्वसाधवा कनिष्ठकाभ्या नम ॐ ह्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः धर्मकरतलकर पृष्ठाभ्या नम ॥

इस तरह करन्यास करके ऋषिमडल स्तोत्र बोलकर पुष्पाञ्जली क्षेपन करना।

आव्हाहन

ॐ ह्रीं ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन सुमति पद्मप्रभ सुपार्श्व चन्द्रप्रभ सुविधि शीतल श्रेयास वासुपुज्य विमल अनंत धर्म शांति कुंथु अर मल्लि मुनिसुव्रत नमि नेमि पार्श्व वर्द्धमानांता तीर्थंकर परमदेवा तस्याधिष्टायकादेवा अत्रागच्छगच्छ अवतरय स्वाहा ॥

इस मंत्रको बोलकर पुष्पाञ्जली प्रक्षेप करके आव्हाहन करना चाहिए।

स्थापना

ॐ ह्रीँ ऋषभ० (२४) तीर्थकर परमदेवा तस्याधिष्टायकादेवा अत्र तिष्ठ ठः ठः स्वाहा ॥

॥ सन्निहीकरमंत्र ॥

ॐ ह्रीँ ऋषभ० (२४) वर्द्धमानाता तीर्थङ्कर परमदेवा तस्याधिष्टायकादेवा अत्र मम सन्निहिता भववषट् ॥

इस मंत्रको बोलकर तीर्थङ्करोकी स्थापना व यंत्रमें जो स्थापना है उनकी अष्ट द्रव्यसे पूजा करना, और प्रत्येक पूजा का श्लोक बोलकर (पूजा के श्लोक बृहत्कारी पूजामे से बोलना) प्रत्येक श्लोक के बाद बोलनेके इस तरह हैं !

(जल) ॐ ह्रीँ ऋषभ वर्द्धमानेभ्योस्तीर्थंङ्कर परमदेवेभ्य जल चर्चयामिति स्वाहाः ॥ (चदन) ॐ ह्रीँ ऋषभ वर्द्धमानेभ्योस्तिर्थंङ्कर परमदेवोभ्य गधय चर्चयामिति स्वाहा ॥ (पुष्प) ॐ ह्रीँ ऋषभ० वर्द्धमानेभ्योस्तिर्थंङ्कर परमदेवेभ्यो पुष्पं चर्चयामिति स्वाहा. (अक्षत) ॐ ह्रीँ ऋषभ वर्द्धमानेभ्योस्तिर्थङ्कर परमदेवेभ्यो अक्षत चर्चयामिति स्वाहा ॥

आहुति देनेके लिये बैठना चाहिए। क्योंकि हरएक मं साधनामें साधकके पास सिद्धकी आवश्यकता होती है हवनके लिये लकडी पलास जिसको खाखरा भी कहते हैं उत्तम मानी गई है, और वैसे तो पीपलकी खेजडेकी चदन की, लालचदनकी, और आरणी की लकडी भी लेना बताया है। लकडी सूखी और जीवात रहित होना चाहिए। साधना शांति तुष्टि पुष्टि के हेतु है तो नौ अगुल लंबे लकडी के टुकडे होना चाहिए। यदि आकर्षण आदि के लिये है तो बारह अगुल लंबे टुकडे लेना चाहिए। और लकडीके टुकडे एकसौ आठसे ज्यादे न होना चाहिए। जब सब प्रकार की सामग्री तैयार हो जाय, बाद में अष्ट द्रव्य से हवन कुंडको पुज कर अग्नि को पूजना और कपूर को आग से या दीवेकी ज्योति से सलगा कर हवनकुंड में रखना चाहिए।

मंत्र साधना के लिये विशेषचार क्रिया जिस में स्थापना आदि आ जाती है जिसका विवरण पहले बता दिया है। उस प्रकार सारा विधान करके मंत्रकी एक माला फेर कर बादमें जितनी आहुति देना हो मनमें तो मंत्र बोले और आहुति देते समय जितने पुरुष इस क्रिया में बैठे हों वह सब एक साथ स्वाहा' शब्द बोल कर आहुति देवे। आहुति चाटली या चम्मच आदि से न देवे और उपर से वस्तु भी न डेवे लेकिन अर्पण करदे



२
१८
६
१३
१४
२०
१०
२२
२१
१७
ह्रौं वर्त्ते

तर्जनी का मध्य नौवा तर्जनी के अतका पेरवां दशवा मध्यमा के अतका ग्यारहवा अनामिका के अवका, वारहवा कनिष्ठा के अतका इस तरह वारह हुवे, बाद में मध्यमा के बीचका तेरहवा, अनामिकाके मध्यका चौदहवा, कनिष्ठाके मध्यका पन्द्रहवा, कनिष्ठा के नीचे याने अतका सोलहवा, अनामिकाके नीचेका सत्तरहवा, मध्यमाके उपरका अट्ठारहवा, तर्जनीके उपरका उन्नीसवा, तर्जनीके मध्यका वीसवा, तर्जनीके अतका इकीसवा, मध्यमाके नीचेका बाइसवा, अनामिकाके नीचे तेइसवा, कनिष्ठाके नीचे चौवीसवा, इस तरह चौवीस तीर्थङ्करोंकी स्थापना वाले ह्रीँ आवर्त में उङ्गलीयों पर चौवीस जिनका जाप इस तरह कर सकते हैं। यह आवर्त ह्रीँ उपासना के लिए आदरणीय है, और इस पद्धति से जाप करे तो शुभ है।

मालाविचार

माला मोतीयोंकी, मूगाकी, अकलवेरकी, केरवेकी, स्फटीककी, सोनेकी, चादीकी, सूतकी और चदनकी वताई गई है लेकिन ऋषिमडल के मूलमत्र का ध्यान करने के लिये सफेद या पीले रग की माला लेना चाहिए। माला स्फटिक या केरवेकी हो अथवा सूतकी हो जैसी जिसको हो सके उपयोग करे।